नेहू ज्योति

हिन्दी प्रकोष्ठ
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
शिलांग - 793022 (मेघालय)

नेहू ज्योति

हिन्दी प्रकोष्ठः पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय की वार्षिक पत्रिका
वर्ष 2022-23

संरक्षक
प्रो. प्रभा शंकर शुक्ल
कुलपति
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग
ई-मेल : vcnehu@nehu.ac.in

संपादक
प्रो. दिनेश कुमार चौबे
प्रोफेसर हिन्दी विभाग,
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग
ई-मेल : dkcnehu76@gmail.in

संपादक मंडल
डॉ. जयनारायण नायक
एम.ए., पी-एच.डी., कुलसचिव, नेहू, शिलांग
ई-मेल : regtroffice@nehu.ac.in

प्रो. स्ट्रीमलेट डखार
एम.ए.. पी-एच.डी.
संकायाध्यक्ष, मानविकी संकाय, नेहू, शिलांग
ई-मेल : sdkhar@rediffmail.com

डॉ. मदन मोहन सिंह
एम.ए., पी-एच डी.
बुनियादी विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञानिक,
नेहू, शिलांग
ई-मेल : mms.nehu@gmail.com

डॉ. अरुण कुमार सिंह
एम.ए., पी-एच डी.
सहायक आचार्य, विधि विभाग,
नेहू, शिलांग
ई-मेल : arunlaw69@gmail.com

श्री राजेन्द कुमार राम
एम.ए., हिन्दी अधिकारी,
नेहू, शिलांग

परामर्श मंडल
प्रो. टी. थी. सुब्बा
नृ-विज्ञान विधा, नेहू, शिलांग

प्रो. बी. पांडा
अर्वजास्क विधा, नेहू, शिलांग

प्रो. अमरेन्द कुमार ठाकुर
इतिहास विभाग, नेहू, शिलांग

प्रो. एच. असकरी
रसायनशास्त्र विभाग, नेहू, शिलांग

प्रो. दिलीप मेधी
हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी

प्रो. ओकेन लेगो
राजीव गांधी वि.वि., दोईमुख, अरुणाचल प्रदेश

संपादन सहयोग
डॉ. सुनील कुमार
ई-मेल : sunilbhu50@gmail.com

लेखक के विचारों रो संपादक मंडल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

संपादक एवं प्रकाशक का पता
हिंदी प्रकोष्ठ, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय
प्रशासनिक भवन, नेहू परिसर, शिलांग-793022 (मेघालय)
दूरभाष : 0364-2721331

(इस पत्रिका कम संपादन एवं प्रकाशन पूर्णतःअवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।)

मूल्य : तीस रुपये मात्र
मुद्रण : एस. एन. इंटरप्राइज, शिलांग-793008

अनुक्रम

आलेख खंड

1. झीनी-झीनी बीनी चदरिया : अमर 'मतीन' **डॉ. मधुकर देशमुख** 00
2. खासी लोक कथाओं का वैशिष्ट्य **डॉ. फिल्मेका मारबनियांग** 00
3. ख्याति के हकदार **उषा किरण टिबड़ेवाल** 00
4. वर्तमान दौर में भूमंडलीकरण के कुछ पहलु **डॉ. विजय कुमार** 00
5. लोक-संस्कृति का पुनर्जागरण **डॉ. श्यामबाबू शर्मा** 00
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मूल सिद्धांत एवं प्राथमिक शिक्षा में परिवर्तन की आवश्यकताएँ **डॉ. कृष्ण कुमार पाण्डेय** 00
7. वन संरक्षण एवं पूर्वोत्तर भारत **चैताली दीक्षित** 00
8. मेघालय में नेपाली कविता की विकास यात्रा **डॉ. बिक्रम थापा** 00
9. पूर्वोत्तर भारत में नेपाली लोक संस्कृति एवं गीत का विकास **रीना रेग्मी** 00
10. गारो भाषा—एक परिचय **शाईनी. के. सङ्मा** 00
11. आधुनिक उपन्यास साहित्य में स्त्री-सशक्तीकरण आयाम **डॉ. रशमी सी. मलागई** 00
12. खासी समाज और संस्कृति **शाईलिन खरपुरी** 00
13. मिजोरम **प्रेरणा शर्मा** 00
14. पूर्वोत्तर भारत और सिख गुरूओं का इतिहास **आलोक सिंह** 00
15 जलवायु परिवर्तन की समस्या **रिया धर** 00
16. २१ वीं सदी की स्त्री-लेखिकाओं की कहानियों में भूमंडलकीकरण का प्रभाव **दीपक कुमार मिश्र** 00
17. सिक्किम में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी **कृष्ण कुमार साह** 00
18. तांग्सा आदिवासी समुदाय के परिप्रेक्ष्य में पर्व-त्यौहार और लोक साहित्य **रेमोन लोंगकु** 00

काव्य खंड

19.	प्रकृति रोती है	**प्रो. स्ट्रीमलेट ड्खार**	00
20.	क्या बात थी	**प्रो. उमा शंकर**	00
21.	दो कविताएँ	**विहाग वैभव**	00
22.	झुकेगा न देश मेरा	**डॉ. बिहारी झा**	00
23.	आजादी का अमृत महोत्सव	**हेमलता गोलछा**	00
24.	नागफनी मुरझा जाये	**मंजु श्रीवास्वासतव 'मन'**	00
25.	हे राजनीति	**डॉ. प्रखर दीक्षित**	00
26.	कठपुतली	**डॉ. रचना निगम**	00
27.	चुपचाप	**राजकुमार राजन**	00
28.	चेहरों का बाजार	**मल्लिका डे**	00
29.	औरत	**सरिता सैल**	00
30.	लाल मेरा भारत माँ का	**डायाफिरा खारसाती**	00
31.	दो कविताएँ	**पंकज मिश्र 'अटल'**	00

कथा खंड

32.	जीवनचक्र	**कीर्ति श्रीवास्तव**	00
33.	नया घूंघट	**तुलिका श्री**	00
34.	मुस्कान	**रूनू बरूवा रागिनी तेजस्वी**	00

आलेख खंड

झीनी-झीनी बीनी चदरिया : अमर 'मतीन'

डॉ. मधुकर देशमुख

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, इंद्रायणी महाविद्यालय, तळेगाव दाभाडे, पुणे

वही साहित्य श्रेष्ठ माना जाता है जिसमें सत्यं, हितं एवं प्रियं का सहज सन्निवेश हो। सत्यं, हितं, एवं प्रियं को ही क्रमशः सत्यं, शिवं एवं सुन्दरम् की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। सामान्यतः यह माना गया है है कि साहित्य के सभी गुण इन तीनों में समाहित है। सत्यं से ही साहित्य में स्वाभाविकता आती है। हितं (शिवं) इस तत्व में लोक रक्षण की भावना निहित है और जिन विशिष्टताओं के कारण साहित्य अपने पाठकों को आकृष्ठ कर अपने में उलझाएँ रखता है उसका प्रियम् (सुंदर्म) गुण है। कृति की श्रेष्ठता इन तीन तत्वों अर्थात् गुणों के समन्वय में होता हैं। ऐसी श्रेष्ठ कृतियों में उभरा हुआ चरित्र आदर्श और अमर चरित्र की पंक्ति में समाहित होता है। ऐसे चरित्रों में लोक रक्षण की भावना सुन्दरम् ही नहीं शिवम् भी हो, प्रियम् ही नहीं हितकर भी होनी चाहिए। जैसे महादेव ने हलाहल प्राशन कर संपूर्ण संसार को अमृत-सौन्दर्य दिया जिसके मूल में लोक-सृष्टि का रक्षण, कल्याण एवं मंगलकाना ही रही है। समाज में ऐसी मनोवृत्ति वाले चरित्र हिमनग की भांति मानव के अंतस में उभरते हैं।

'अमर शब्द का संबंध अंशतः अमृत से है। सामान्यतः भारतीय जन-मानस की यह धारणा है कि अमृत सेवन से अमरत्व प्राप्त होता है. जिससे मनुष्य कालजयी बनता हैं। समुद्र मंथन में निकले अमृत को प्राशन कर राहु-केतु भी देवताओं की पंक्ति में जा बैठे अर्थात् अमर हो गए। साहित्यिक दृष्टि से पौराणिक सन्दर्भ में अमरत्व अलौकिकता को समेटे हुए हैं तो भौतिक (लौकिक) जगत् के सन्दर्भ में यही अमरत्व उदात्ता की और संकेत करता है। इस प्रकार अम चरित्र कहने से हमारे सामने सद्‌चरित्र, उदात्तता की और संकेत की छवि' उभरती है।

परिवर्तन सृष्टि का शास्वत नियम है। परिणामस्वरूप साहित्य में भी स्थल-काल सापेक्ष परिवर्तन होता रहता है। वैश्वीकरण के इस युग में अमर चरित्र की संकल्पना में

काफी मात्रा में परिवर्तन हुआ है। आज अमर चिरत्रों में उन सभी चरित्रों को समाहित किया जाता है, जो आदर्श या उदात नहीं प्रत्युत तामसी वृत्ति से चरित्र के संखलन के कारण वितेषणा, दारेषणा और लोकेषणा का शिकार होकर खलनायक के रूप में सामने आते हैं और आदर्श चिरत्रों के प्रतिकूल दिखाई दते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि आज खलनायक या खलनाय्की को भी अमरता की श्रेणी में रखा जाने लगा है। मात्र प्रसिद्धि ही इस अमरता की पृष्भूमी है। ये चरित्र अपने कृत्यों-कुकृत्यों से प्रसिद्ध हो जाते हैं और स्थल-काल सापेक्ष निरंतर उभरते हैं। जैसे 'राम' तथा 'पांडवो' का सन्दर्भ आते ही क्रमशः 'रावण' और 'दर्योधन' चरित्र भी उभर आता है। क्योंकि 'रावण' का 'राणत्व' में तथा 'दुर्योधन' का 'दुर्योधनत्व' के विरोध में ही क्रमशः 'राम' का 'रामत्व' मे और 'पांडवत्व' हैं। अर्थात् 'असत्' पर 'संत्' की, 'अधर्म' पर 'धर्म' की विजय दिखाई देती है।

आजकल हिंदी साहित्य में अमर चरित्रों की एक और श्रेणी दिखाई देती है। इनमें उन चरित्रों का समावेश होता है जो जीजिविषा हेतु संघर्ष है, जो शोष्ण के प्रति जाग्रत हैं, जो अन्याय और अत्याचार के विरोध में आवाज उठाने की क्षमता रखते हैं। इतना ही नहीं वे पीड़ित, शोषितों के प्रति सहानुभूति से पेश आकर शोष्णकर्ताओं के प्रति कड़ा रूख अपनाकर संघटित होकर संघर्ष तो करते ही हैं, साथ ही संघटित होने पर बल देते हैं। इसके पीछे जन-सामान्य के कल्याण एवं मंगलकामना की भावन प्रमुख होती है। ऐसे चरित्र भले ही लोकिक हो किन्तु वे अपने आदर्श कार्य के कारण अलौकिकता को प्राप्त करते दिखाई देते हैं।

हिंदी साहित्य पर एक नजर डालने से पता चलता है कि कबीर जैसे महानसंत की कार्य-प्रणाली इसका प्रमाण है। कबीर ने अपने जीवनकाल में धर्म-निरपेक्ष और मानवता का समर्थन किया। सांप्रदायिकता से ऊपर उठकर सामाजिक अन्याय, अत्याचार, शोषण, अंधविश्वास, कुरीतियों एवं सभी कुप्रथाओं का कडा विरोध किया जिसके फलस्वरूप कबीर महात्मा कबीर बने।

अब्दुल बिस्मिल्लाह का 'झीनी झीनी बीन चदरिया' उपन्यास पर कबीर के 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' का अर्थात् ब्रह्मा, जीव और जगत् का दार्शनिक प्रभाव दिखाई देता हैं। विषय-विकारों के मखमली लिहाफ में लिपटे जगत् में कर्तव्य-अकर्तव्य, क्रिया-प्रतिक्रिया के चक्र में घूमता हुआ जीव 'ब्रह्म' अर्थात् परम तत्व मोक्ष प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। उसी ब्रह्म की ओर जिसने जीवात्मा को जीवन रूपी ताने-बाने से बनी हुई चदरिया ओढ़कर इस मायावी जगत् में भेजा हैं। कबीर के इसी दार्शनिक चिंतन का प्रभाव परोक्ष रूप से उपन्यास पर परिलक्षित होता है। मानव (मतीन का चरित्र) अर्थात् जीव का जीवन की विविध गतिविधियों, उतार-चढाओं के ताने-बाने से बुना हुआ जगत् अर्थात् समाज में निरंतर संघर्षशील रहता है। इसका लक्ष्य केवल 'ब्रह्म' अर्थात् अपना लक्ष्य, आदर्श, सच्चाई, शोषण-मुक्ति आदि को प्राप्त करना रहा है। स्पष्टतः यह

कहा जा सकता है कि उपन्यास के प्रमुख चरित्र 'मतीन' पर अप्रत्यक्ष रूप से कबीर दर्शन का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है जो संपूर्ण उपन्यास में मतीन के जीवन दर्शन के रूप में प्रतिबिबित हुआ है।

इस विशिष्ट जीवन दर्शन के द्वारा उपन्यासकार अब्दुल बिस्मिल्लाह ने पथ-प्रदर्शन का कार्य करते हुए मतीन के माध्यम से बुनकरों के विद्रोह और जीवन के मुक्ति संघर्ष के जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत कर बदलते भाव-बोध को दर्शाने का सफल प्रयास किया हैं। वर्तमान की युवा पीढी प्रत्येक क्षेत्र में बदलते परिवेश और जीवन-सन्दर्भों के प्रति सजग दिखाई देती है। आज की पीढी को परंपरा की लीक पर चलना स्वीकार नहीं है क्योंकि जीवन की हर समस्या उनके लिए प्रश्नचिन्हं बन जाती है।

'झीनी झीन बीन चदरिया' उपन्यास में बुनकरों के मुक्ति-संघर्ष का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत है। प्रस्तुत उपन्यास में बुनकरों की अभावग्रस और रोग-जर्जर दुनिया में हम मतीन, अलीमुन और नन्हे इकबाल के सहारे प्रवेश करते हैं जहां उपस्थित है रऊफ चाचा, नजबुनिया, नसीबन बुआ. रेहाना, कमरून, लतीफ, बशीर और अल्ताफ जैसे अनेक चरित्र, जो टूटते हुए भी मजबूत है। वे हालात से समझौता करना नहीं चाहते बावजूद इसके उनके लड़ना और उन्हें बदलना चाहते हैं और अंततः अपनी इस चाहत को जनाधिकारों के प्रति जागरूकत अगली पीढ़ी के इकबाल को सौंप देते हैं। इस प्रकिया में लेखक ने शोषण के उस पुरे तंत्र को भी बड़ी बारीकी से बेनकाब किया है जिसके एक छोर पर है गिरस्ता और कोठीवाल तो दूसरे छोर पर भ्रष्ट राजनितिक हथखंडे और सरकारकी तथाकथित कल्याणकारी योजनाएं है। साथ ही बुनकर-बिरादरी के आर्थिक शोषण में सहायक उसी की अस्वस्थ परंपराओं. सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक जड़वाद और साम्प्रदायिक नजरियें को भी अनदेशा नहीं किया है।

उपन्यास का नायक मतीन है, जो पेशे से बुनकर है। बुनकर शोषण के शिकार हैं। मतीन बुनकरों पर हो रे अन्याय, अत्याचार और शोषण के विरूद्ध आवाज उठाता है लेकिन शोषकों द्वारा उसकी आवाज दबाई जाती है। शोषणके विरूद्ध उसके प्रयास असफल हो जाते हैं किन्तु अपनी बिरादरी पर हो रहे अन्याय अत्याचार के खिलाफ अपने समाज को सचेत और जागृत करने में मतीन सफल हो जाता है। मतीन के व्यक्तित्व का एक पहलू यह भी है कि पराजित होने के बावजूद लड़ने की इच्छाशक्ति और अधिक प्रबल हो जाती है।

मतीन के माता-पिता बचपन में खो जाते हैं; इसलिए वह अत्यंत कम उम्र में ही रोजी-रोटी के लिए काम करना शुरू कर देता है। मतीन एक सामान्य बुनकर के रूप में पाठकों क समक्ष उभरता है। जैसे-जैस वह अपने काम में कुशल हो जाता है वैसे ही वह अन्य बुनकरों के सामान शोषण की दोहरी चक्की में पिसता जाता है। एक ओर गिरस्त तो दूसरी ओर कोठीवाली द्वारा शोषण का शिकार हो जाता है। अर्थाभाव के कारण वह अपनी खुद की कतान नहीं खरीद सकता इसलिए दूसरी की बानी पर ही बीनने के लिए

मजबूर होता है। मतीन गिरस्त हाजी साहब से कतान लेता है यहीं से उसका जीवन हाजी साहब जैसे सेठ पर निर्भर रहने लगता है। कड़ी मेहनत करे पर उसे एक हप्ते बाद मात्र नब्बे रूपये मिलते हैं। इसमें भी कई प्रकार की कटौतियां होती है जैसे- "गिरस्त जो है साडी में ऐब दिखाता है।" (अब्दुल बिस्मिल्लाहः 'झीनी झीनी बीनी चदरिया'- प्रका. २००३ : पृ. क्र. १७) पत्नी अलमुनिया क्षयरोग (टीवी) से ग्रसित है। पत्नी के इलाज के लिए हो रहे खर्च के कारण खाने के लाले पड़े है। इसलिए दुबारा हाजीसाहब जैसे सेठ से ॠण चुकाने में ही व्यतीती होता है। ऐसी परिस्थिति में भी मतीन अपने बेटे को पढ़ा-लिखाकर बाबू बनाना चाहता है क्योंकि उसे ऐसा लगता है कि बेटा अगर पढ़-लिखकर बड़ा बाबू बनेगा तो अपना जीवन ॠणमुक्त होकर समाज की उन्नति और कल्याण के काम आयेगा।

बुनकर मतीन कड़ी मेहनत से साड़ियाँ बुनकर तैयार करता है लेकिन बदले में क्या मिलता है- "सिर्फ एक लुंगी, भैंसका गोष्त और नंग धडंग जाहिल बच्चे।" (अब्दुल बिस्मिल्लाहः 'झीनी झीनी बीन चदरिया' प्रका, २००३ः पृ-. क्र. ५४) लगभग सभी बुनकरों की यही स्थिति है। इस प्रकार बुनकरों पर हो रहे अन्याय, अत्याचार और शोषण के निवारण हेतु तथा मुक्ति के लिए मतीन संघटन (सोसायटी) बनाकर शोषकों का मात्र विरोध करना ही नहीं चाहता बल्कि संघटन के माध्यम से सरकार से अपील कर आर्थिक सहायता हेतु गुहार लगाना चाहता है। मतीन को लगता है कि संघटन के माध्यम से सरकार से गुहार करने पर आर्थिक सहायता मिलेगी तो कतान खरीदकर संघटन केनाम पर साड़ियाँ बुनने का कारखाना आरंभ किया जा सकता है जिससे बुनकरों की आर्थिक स्थिति में सुधार आ सकता है। यह सपना लेकर संघटन आरंभ करने हेतु तीस सदस्य और सदस्य शुल्क जुटाता है। सदस्य शुल्क जुटाने के बाद बैंक पहुँचने पर पता चलता है कि इन लोगों के नाम पर पहले ही फर्जी संघठन गठित हो चुका है। इस सन्दर्भ में बैंक मैनेजर मतीन को सलाह देते हए कहता है कि –"जनाब अब्दुल मतीन अंसारी साहब, जाइए और चुपचाप अफनी साडी बिनिये। फ्राड करना बहुत बड़ा जुर्म है।" (अब्दुल बिस्मिल्लाहः 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' प्रका, २००३ः पृ.क्र. १०३) फर्जी संगठन बनानेवाले हाजी अमीरल्ला के खिलाफ लड़ने में मतीन अपने आप को असमर्थ पाता है क्योंकि इन गिरस्ती की बहुत लम्बी पहुँच है।

इस प्रकार मतीन इस लड़ाई में पराजित होता है। उसका सपना टूट जाता है बावजूद इसके वह बनारस की जिन्दगी से समझौता नहीं करना चाहता है और कुकछ बेहतर बनने के लिए तथा अच्ची परिस्थि में काम करने के लिए बनारस छोड़कर मऊ चला जाता है। मऊ आने पर मतीन को पता चलता है कि यहाँ की परिस्थिति और बनारस की परिस्थिति में कोई अंतर नहीं है। अर्थात अन्या., अत्याचार और शोष्ण में कोई फर्क नहीं है। इस सन्दर्भ में मतीन का कहना है कि – "मऊ और बनारस में फर्क ही क्या है? गरीब तो हर जगह एक जैसे है।" (अब्दुल बिस्मिल्लाहः 'झीनी झीनी बनी

चदरिया' प्रका. २००३ः पृ. क्र. १४४) अतः यह कहना अनुचित नहीं होगा कि बनारस हो या मऊ या फिर देश का कोई भी शहर गरीबों पर गरीबों पर अन्याय. अत्याचार होता ही रहता है। भारत में मजदूरों का शोषण होना आम बात है. फिर चाहे वर मजदूर कल-कारखानों का हो या फिर खेत में काम करने वाला हो। इतिहास साक्षी है कि अपने देश में शोषित, पीड़ित, अत्याचारित समाज कितना भी संघर्ष करें देश की सामाजिक, राजनितिक एवं आर्थिक व्यवस्था इतनी मजबूत हैं कि वह विजयी नहीं हो सकता।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास का केन्द्रीय पात्र मतीन शोषकों का विरोध करने में अपने आपको असमर्थ पाता है। परिमामतः मतीन मुक्ति-संघर्ष की लड़ाई में पराजित होता है। किन्तु फिर भी मतीन के व्यक्तित्व की यह खास विशेषता रही है कि कई बार संघर्ष की लड़ाई हारने पर भी मतीन निराशा की गर्थ में जीवन जीना नहीं चाहता बल्कि वह बार-बार संघर्ष कर जीत हासील करना चाहात है। कई बार टूटने पर भी मतीन में विद्यमान व्यवस्था के खिलाफ लड़ने की इच्छा- शक्ति जाग्रत होती रहती है।

'झीनी झीनी बनी चदरिया' उपन्यास बनारस के साड़ी बुनकरों के कठिन संघर्ष का बयान है। प्रस्तुत उपन्यास केवल बुनकरों के मुक्ति संघर्ष की कथा नहीं है बल्कि देश के समस्त शोषित वर्ग के मुक्ति संघर्ष की यशोगाथा है। उस फिनिक्स पक्षी के सामान शोषित वर्ग नया जीवन जीना चाहता है किन्तु भारतीय व्यवस्था उन्हें उड़ने (जीने) नहीं देती यह भारतीय समाज की त्रासदी है। 'झीनी झीन बीनी चदरिया' उपन्यास में चित्रित मतीन का संघर्ष बुनकरों के जीवन का अर्थ भी है और सौन्दर्य भी।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि, प्रस्तुत उपन्यास का प्रमुख पात्र मतीन अफने त्रासदी भरे जीवन में आदर्श समेटे हुए है जो उसे कालजयी बनाने में सहायता प्रदान प्रदान करता है। शोषण चक्र में निरंतर पिसते हुए भी मतीन का जीवन के प्रति दृष्टिकोण अत्याधिक सकारात्मक रहा है बावजूद इसके वह आगामी पीढी की चिंता करते नजर आता है। मतीन ने अपने जीवन में कभी सांप्रदायिकता को महत्व नहीं दिया। मतीन सांप्रदायिकता के संकुचिन दायरे से बाहर आकर, एकजुट होकर आराजक सांती व्यवस्था के प्रति केवल आक्रोश व्यक्त नहीं करता बल्कि शोषण चक्रम में पिसते हुए असाहाय्य गरीब मजदूरों, बुनकरों का जीवन संवारने का काम करता हैं. वह एक प्रतिमान के रूप में खडा होता है। अतः यह कहना अनुचित नहीं होगा की मतीन गरीब मजदूरों, बुनकरों को अपने हक के लिए लड़ने की ताकत ही नहीं देता बल्कि उन्हें प्रेरित भी करता है। अपने अधिकार के प्रति उन्हें सचेत ही नहीं करता बल्कि दीपस्तंभ के रूप में खडा होता है। अतः मतीन समकालीन पीढी के लिए आदर्श तो है ही साथ ही आनेवाली पीढी के लिए भी आदर्श एवं प्रेणास्रोत बना रहेगा। अतः यह कहना अनुचित नहीं होगा कि मतीन का जीवन- दर्शन युवा चेतना के लिए पथ- प्रदर्शक का पर्याय है।

खासी लोक कथाओं का वैशिष्ट्य

डॉ. फिल्मेका
सेंट अंथोनी कॉलेज, शिलांग

खासी लोकथाओं में प्रयुक्त कथानक रूढ़ि

लोक साहित्यविदों ने लोककथा में प्रयुक्त होने वाले अनेक कथानक रूढ़ि अथवा अभिप्राय का उल्लेख किया है। लोकसाहित्य के विद्वानों द्वारा विवेचित कथानक अभिप्रायों के आधार पर खासी लोककथाओं में प्रयुक्त कथानक रूढ़ि का विवेचन इस प्रकार है।

१. धर्मागाथा अभिप्रायः सृष्ठि प्रक्रिया तथा मानव जीव-मनुष्य की सृष्टि- 'उ लोम सौहपैतलैइ' नामक कथा खास जनजाति की उत्पत्ति से संबंधित है। इस कथा के अनुसार खासी जनजाति को उत्पत्ति ईश्वर से मानी गई है. यह मान्यता है कि इस जनजाति पर ईश्वर की इतनी कृपा थी कि इस जनजाति के सोलह परिवार में से सात परिवार का जिड़किङ जिसयार अथवा स्वर्ण सेतु के माध्यम से धरती से स्वर्ग की यात्रा तय करते थे। जब मनुष्य सांसारिकता में लिप्त हो गया तो ईश्वर ने वह सेतु तोड़ दिया जिससे वे सात परिवार धरती पर रह गए। आज भी खासी जनजाति स्वयं को 'उ हन्यव त्रैप' अथवा सात दर या सात परिवार के नाम से पुकारती है।

रीति-रिवाजों का मूल-खासी भाषा में रीति रिवाजों के मूल संबंधी अभिप्राय मिलते है। खासी में मुर्गे-बलि की प्रथा प्रचलित हैं। इस प्रथा से संबंधित 'का क्रैम लामैत का कैम लाताइ' कथा मिलती है। कथा के अनुसार एक बार सूर्य सभी प्राणियों द्वारा अपमानित होने के कारण उनसे रूठ कर का क्रैम लामैत का क्रैम लाताङ में छिप जाती है जिससे पूरा संसार अंधकार में डूब गया। रूठे हुए सूर्य को मनाने में सभी प्राणी असफल हो गए। अंत में सूरय को मनाने के लिए मुर्गा मान जाता है। लेकिन मुर्गे ने एक शर्त रखी कि यदि वह इस कार्य में सफल हुआ तो पवित्र वेदी पर उसकी बलि चढ़ायी जाये। वह सूर्य को मनाने में सफल हो गया। उसके कारण सूर्य ने फिर से संसार को प्रकाशित किया। शर्तानुसार मुर्गे की बलि चढ़ायी गयी। इस प्रकार खास धर्म को मानने वाले लोगों में मुर्गें-बलि की परम्परा आज भी प्रचलित है। इस धर्म में मुर्गे को ईश्वर तथा मनुष्य के मध्यस्थ के रूप से माना जाता है।

पृथ्वी-मर्त्यलोकः संसार के संकट- इस अभिप्राय का प्रयोग खासी लोककथा 'दियईई' में देखने को मिलता है। कथा के अनुसार संसार के पाप के कारण ईश्व प्रदत् विशिषय वृक्ष उ दिइयइ के विशालकाय शाखाएँ इतने बढ़ गए थे कि सारा संसार अंधकार की चपेच में आग गया था। मनुष्य को यह भय सताने लगा कि सही इस अंधकार के कार उसकी खेती-बाड़ी तथा संपूर्ण जीवन नष्ट न हो जाये। इस प्रकार खासी भाषा में संसारके एक बड़े संकट में पड़ जानेकी कथा प्रचलित है।

२. पशु-पक्षी संबंधी अभिप्रायः खासी लोककथाओं में पशु-पक्षी से संबंधि अनेक अभिप्राय उपलब्ध हैं।

कौवा-पशु-पक्षी संबंधी अभिप्राय में कौवा एक दुष्ट पक्षी के रूप में चित्रित है। 'उ मासी' नामक कथा में मनुष्य को ईश्वर का शुभ संदेश पहुँचाने वाले बैल को कौवा दिशा भ्रमित करता है। कौवे की बात मानकर ही बैल मनुष्य के पास गलत संदेश ले जाता है और परिणाम स्वरूप उसे ईश्वर से दण्डित होना पड़ा। 'का स्इयार वाद का तंआप' नामक कथा में कौवा मुर्गी से मित्रता बढाता है। वह उस पानी में तैरने के लिए कहता है। मुर्गी पानी में तैर नहीं पाती है। तैरने में असमर्थ मुर्गी को पानी में छोड़कर कौवा उसकेबच्चो को खा जाता है।

मोर-'उ क्लब' नामक कथा में मोर व्यभिचार में पड़कर अपनी पत्नी सूर्य को छोड़ देता है और उड़कर धरती पर आ जाती है। धरती पर आकर जब उसे पता चलता है कि जिस सुंदरी के रूप-जाल में फंसर वर अपनी पत्नी छोड़ आया है वह कोई और नहीं बल्कि एक सरसो का खेत है। फिर पछचाने के अलावा उसके पास और कुछ नहीं रह जाता।

पशुओं की प्रकृति तथा लक्षण- खासी में पशुओं की प्रकृति तथा लक्षण से संबंधित कथाएँ उपलब्ध है जैसे मुर्गे के प्रकृति तथा लक्षण के संबंध में यह कहा गया है कि मुर्गा सूर्य के आगमन से पहले वांग देता है इसका कारण यह है कि सूर्य जब पृथ्वी पर वापस लोटने के लिए राजी हो गया था तो मुर्गे ने स्वयं ही सूर्य से कहा था कि जब मैं तीव बार वांग दूँगा तब आप धरती पर पधरना। मुर्गे के सिर पर कलंगी के बारे में यह मान्यता है कि पहले मुर्गा कुरूप हुआ करता था। सूर्य को मनाने के लिए का क्रैम लामित क्रैम लाताङ से पूर्व उसने सभी प्राणियों से अपने लिए पंखों तथा सिर पर मुकुट की मांग की थी। उसने कलंगी उसी समय प्राप्त किया था। मोर के पंख पर सुन्दर गोलाकृतियाँ हैं। इसके बारे में यह माना जाता है कि अपने पति मोर को धरती की ओर जातेदेख सूर्य बहुत रोया था. उसके आँसू मोर के पंखो पर गिरे जस्से उसके पंखो पर सुन्दर गोलकृतियाँ बन गई। खासी में पशुओं की प्रकृति तथा लक्षण संबंधित और कई कथाएँ हैं। जैसे के ऊपर दांत क्यों नहीं होते? लोमड़ी की पूंछ छोटी क्यों हैं? बिल्ली और कुत्ता किस कारण मनुष्य के साथ रहने लगे? बाघ और जंगली सुअर में, मुर्गी और कौवा में, बाघ और बन्दर में दुश्मनी कैसे हुई? का सौहलडैम नाम पक्षी घने जंगल मे कू-कू कर क्यों रोती है आदि।

चालाक पशु- खासी में लोमड़ी और कुत्ता चालाक पशु के रूप में चित्रित है। 'उ खला वाद उन्याङब्री' नामक कथा में लोमड़ी की चालाकी उल्लेखनीय है। बाघ और जंगली सुअर दोनों लोमड़ी को भान नहीं देते थे। इस अपमान का बदला लेने के लिए लोमड़ी ने बड़ी चालाकी से दोनों को एक दूसरे के प्रति भड़काया। इससे दोनों लड़ पड़े। इस लड़ाई में बाघ मारा। इस घटना से लोमड़ी ने दुश्मनी भी निकाली और उसने मर बाघ का मांस भी भर पेट खाया। 'उ क्सव वाद उ स्नियाङ' कथा में सुउर और कुत्ता अपने मालिक के आदेशनुसार खेत में काम करने जाते हैं। सुअर दिन भर कठिन परिश्रम करता और कुत्ता उघता रहता था। लेकिन घर लौटने से पहले कुत्ता हमेशा खेक का चक्कर लगा आता। सुअर द्वारा कुत्ते को काचोरी की शिकायत करने पर मालिक खेत का मुआयना करता है। खेत पर कुत्ते के पैरों के निशान देखकर वह कुत्ते को परिश्रमी मानता है और सुअर को कामचोर। परिणाम स्वरूप वह कुत्ते को अपने घर के आंगन में रहने का स्थान देता है।

पशु-पक्षी द्वारा सहायता- खासी कथाओं में का फऐइट नामक पक्षी मनुष्य की सहायता करता है। 'उ दिइयैङ' कथा में उ दिइयैङ नामक वृक्ष मनुष्य के द्वारा काटे चाने के बाद भी पुनः बढ़ जाता है। का फैइट मनुष्य को बनताती है कि बाघ पेड़ के कटे भाग को चाटता जिससे पेड़ फिर बढ़ जाता है। इसलिए बाघ को मारकर ही उसकी समस्या दूर होगी।'का थावालौङ नामक भतनी नरकट से ही मर सकती है। इस प्रकार पक्षियों को मनुष्य की सहायता करते हुए दिखाया गया है।

पशु-पक्षी द्वारा मनुष्य पालन- 'दिइलेङ' नामक कथा में चील के द्वारा एक मनुष्य का पालन-पोषण करते दिखाया गया है।

३. वर्जन अभिप्राय- लोककथाओं में वर्जन संबंधी अभिप्राय पाये जाते है। इसमें वर्जन कई तरह के हो सकते है जैसे खाने-पीने, देखन, बोलने, स्पर्श करने आदि के वर्जन। खासी कथा 'उ ब्लैन' उ नामक पशु को मारने के बाद यह तय किया गया था कि उसके शरीर के टुकड़े को बचा कर न रखें। पन्तु गांव की एक बढ़िया के परदेश गए पुत्र के लिए मांस का टुकड़ा बचाकर रखा जिससे उस टुकड़े नें पुनः उ ब्लैन का रूप ले लिया।

४. जादुई अभिप्राय- रूपान्तारणः पशु से मनुष्य- खासी कथा 'का लिदौहखा' में का लिदीहखा एक मछली से मनुष्य में रूपन्तारित होती है। वह मनुष्य के सारे कार्य करने में सक्षम होती है। उ रन्दि नामक युवक के साथ विवाह के बंधन में बंधकर वह बच्चे भी जन्म देती है। आगे चलकर उसकी संताने इतने सर्वगुअ सम्पन्न होते है कि वे जाइनतिया क्षेत्र के राज-पाट संभालते है।

रूपान्तरणः मनुष्य में पक्षी- 'का लाइवरकू माइ खन्दव' नामक कथा में दो लड़कियाँ अपने सौतेले पिता के अत्याचार से परेशान होकर पक्षियों के पंख लगाकर का लाइवरकू साङ खन्दव नामक पक्षी में बदल जाती है।

५. चमत्कारी प्राणी- खासी कथा 'उ वियद बाद उ पू हन्दैत' में पंखों वाले मनुष्य का

वर्णन है। ये पंखों वाले मनुष्य एक मूर्ख लड़के को स्वर्ग की रोटी खिलाने के लिए स्वर्ग ले जाते है। लेकिन मूर्ख लड़के की मूर्खता के कारण वे उसे स्वर्ग नहीं पहुँचा पाते हैं। 'का लिदीहखा' कथा में का लिदीहखा एक जल परी है जो मानव रूप धारण करती है। खासी में एक और जलपरी की कथा प्राप्त है जो उ रैन नामक व्यक्ति के समक्ष प्रकट होती है। वह उसके साथ घर बसाने को राजी हो जाती है। उ ब्लैन भी एक चमत्कारी प्राणी के रूप में वर्णित है।

अनोखे व्यक्ति- खासी लोककथा 'उ स्एम मादुर मास्कुत' में एक अनोखे व्यक्ति का वर्णन हैं जिनकी शक्ति उसके आँतों में विद्यमान होती है। यह कई बार मारे जाने के बाद भी पुनः जीवित हो जाता था। उसके आँतो के टुकड़े-टुकड़े कियेजानेके बाद ही उसकी मृत्यु होती है।

अन्य लोको की यात्रा- खासी कथा 'उ वियद वाद उ पू हन्दैत' में मूर्ख लड़ा की यात्रा की इच्छा प्रकट करता है। पंखो वाले व्यक्ति उसे स्वर्ग की ओर ले जाते हैं परन्तु वे उसे स्वर्ग में नहीं पहुँचा सके।

६. दैत्यों के प्रकार – 'उ रामहाह' कथा में एक ऐसे असाधारण शक्ति वाला उ रामहाह का वर्णन है जो पहले लोगो की सहायता करता था लेकिन अहंकार बढ़ जाने से वह अपनी ताकत प्रदर्शन कर लोगों को परेशान करने लगा। 'उ राकत' नामक कथा में उ राकत मनुष्यों का मांस खाने वाला बताया गया है। खासी में डायन की कथा भी मिलती है। 'का राकत' नामक कथा में का राहकत नामक डायन लंका से आयी मानी जाती है। यह ऐसी अदभूत डायन है जो मारे जाने के बाद भई पुनजीवित हो जाती थी।

दैत्यों के चेंगुल में फँसना– 'उ राकत नामक' कथा में एक युवक राक्षण की बेटी से विवाह करना चाहता था वह उससे मिलने जाता है तो राकत कहता है कि उसे मनुष्य की गंध आ रही है और वह उसका मांस खाना चाहता है। उसकी बेटी कहती है कि वह कोई और नही ब्लकि उसका होने वाला दामाद है। यह सुनकर उ राकत उस समय के लिए उसे छोड़ देता है। लेकिन वह बाद में उसको मारने की कोशिश करता है। युवक कुछ समय के लिए उ राकत के चेंगुल में फँस जाता है और बाद में स्वतंत्र हो जाता है।

पराजित दैत्य – खासी कथा 'उ राकत में बंदर उ राकत को चूना खिलाता है जिससे वर मर जाता है। उ रामहाह नामक कथा में उ राहाह नामक दैत्य भोजन में पड़े लोहेके छोटे टुकड़ों के कारण मर जाता है। का राकत भी अंत में वाणों से मारी जाती है।

७. पहचान के लिए परीक्षाएँ – 'उ मानिक राइतौइ' नामक कथा में का लिइमाकाव के बच्चे के पिता की पहचान के लिए बच्चे की परीक्षा ली जाती है। राज्य के सभी पुरूष बच्चे को केले देते हैं यह कहा गया था कि बच्चा जिसके हात से केला लेगा वही व्यक्ति उस बच्चे का पिता होगा। बच्चा किसी के हाथ से केला नहीं लेता है। अंत में वह उ मानिक राइतौङ के हाथ से केला लेता है। इस प्रकार परीक्षा से बच्चे के पिता की पहचान हो जाती है।

८. चतुर था मूर्ख व्यक्ति– 'उ मनकाथियाङ बाद की स्एम मुक्गयार' में उ मनकाथियाङ ने जाइनतिया लोगो से बचने के लिए चारो तरफ यह बात फैला दी कि उ रामहाह (जो असाधारण शक्ति वाला मनुष्य है) उनका साथ दे रहा है इनके लिए उसने लकड़ी से बड़े-बड़े पैर बनवाये और अपन गाँव के चारों तरफ उनके निशान बनवा दिये जिससे यह लगे कि सचमुच ही उ रामहाह उस काँव में आने से डरने लगे। उसने एक बार और चतुराई से काम लिया। जाइनतिया के सैनिकों के सामने उसने ऐसे दर्शाया जैसे यह दल-दल में फँस चुका है जब वे वार करने के लिए उस पर टूट पड़े तो उसने बड़ी आसानी से उनको मौत के घाट उतार दिया।

चतुर आदमी दूसरे के छक्के छुड़ाता है- 'का थादलास्केत्र' नामक कथा में उ साजार नाइली नामक व्यक्ति की व्यवहार कुशलता के कारण उसके राज्य के अन्य मंत्री उससे ईर्ष्या करते थे। उन्होंने राजा को भी उ साजार के प्रति भड़काया। राजा के उसको मारने का षड़यत्र रचा। उ साजार को इसकी भनक लग गई थी। राजा ने उ साजार व उसके लोगों को एक स्थान पर दावत के लिए आमंत्रित किया। दावत शुरू होने में थोड़ा समय बाकी या तो उ साजार ने अपने लोगों के साथ मिलकर कुछ ही समय में मात्र धनुष से जमीन खोदकर एक बड़ा तालाब बना डाला। इस प्रकार उ साजार ने अपना इरादा बदल दिया।

मूर्खता की अति – 'उ बियद बाद उ पू हन्दैत' कथा में पखों वाले मनुष्यों ने पहले ही लड़के से कह दिया था कि वह उन्हें कसकर पकड़े क्योंकि अगर उसका हाथ छूट गया तो वह नीचे गिर मर जायेगा पंखो वाले मनुष्य उड़ने लगे तो लड़का उनसे स्वर्ग की रोटी के बारे में तरह-तरह के प्रश्न करने लगा। उन्होंने उसे चुप रहनेको कहा। मगर उसने उनसे एक और प्रश्न किया। प्रश्य यह था "क्या स्वर्ग की रोटी इतनी बड़ी होगी?" यह कहते हुए उसने अपने दोनों हाथ फैला दिये। इससे उसके हाथ की पकड़ छूट गयी वह जमीन पर गिरकर मर गया। इस कथा में लड़के की मूर्खता की अति को दर्शाया गया है।

९. घातक धोखा- 'स्एम मादुर मास्कुत' में सुतड़ा का राजा नियाङ नामक राजा को मारना चाहता था। कई बार वो मारे जाने का बाद भी वह पुनः जीवित हो जाता था सुतंडा के राजा ने एक रूपवती स्त्री को उसके पास भेजा। रूपवती स्त्रीने पहले नियाङ को अपने प्रे-जाल में फँसाया। राजा नियाङ से विवाह करने के बाद उसने उसकी रहस्यमय शक्ति का रहस्य पूछा। अपने प्रेम पर पूर्ण विश्वास का राजा नियाङ ने रहस्य खोल दिया कि उसके प्राण उसके आँतो में बसे है। स्त्री ने सुतड़ा को इसकी खबर दे दी। इससे सुतड़ा के राजा ने नियाङ को आसानी से खत्म कर दिया। इस प्रकार इस कथा में एक पत्नी द्वारा अफनि पति को घात करे धोखा दिया गया है।

चोरियाँ तथा ठगी– खासी में चोरी तथा ठगी का अभिप्राय 'उक्वाइ-तम्पव' कथा में मिलता है। इस कथा में एक चोर चोरी के इरादेसे उस घर में घूमता है जहाँ पहले से तीन

लाशें पड़ी हुई थी। लोगों के द्वारा तीन हत्याएँ करनेके आरोप के जर से वह अपनी भी जान दे देता है।

व्यभिचार विषयक धोखा-खासी लोककथाओं में व्यभिचार विषयक धोखे वर्णित है। 'उ मानिक राइतौङ' नामक कथा में रानी का लिइमांकाव का पति बहुत लंबे समय तक परदेश में रहता है। उ मानिक रातौङ के आकर्षक व्यक्तित्व के कारण वह धीरे-धीरे उससे प्रेम करने लगती है। कुछ समय के बाद उनका प्रेम इस पड़ाव पर पहुँच जाता है कि वह उ मानिक रातौङ के बच्चे को जन्म देती है। 'उ क्लब नाम कथा में मोर व्यभिचार के कारण अपनी पत्नी सूर्य को छोड़कर धरती की सुन्दरी' 'सरसो की खेत' की ओर आकृष्ट होता है।

१०. घमंड का सिर नीचा– खासी कथा 'का स्कैंइ' में हिरणी घोघी की दुर्बलता को देखकर उससे दौड़ की प्रतियोगिता करने को कहती है। घोघी हिरणी के पीठ पर चढ़ जाती है और दौड़ मेंउसके बराबर पहुँच जाती है। इस प्रकार अपनी क्षमता का घमण्ड करने वालों हिरणों का सिर नीचा हो जाता है। 'का झैत वाद का याम' नामक कथा में शिल्लौङ देवता की दो पुत्रियाँ दौड़ की प्रतियोगिता करती है। दोनों नदी के रूप में बहती हैं। का याम को अपनी शक्ति पर बहुत घमण्ढ था। दोनों बहने अलग-अलग रास्तेसे बहती है। इस प्रतियोगिता में का झौत की जीत होती है और का याम का घमण्ड चूर-चूर हो जाता है।

११. भविष्यवाणियाँ –खासी कथा 'उ दिङयइ' मनुष्य जब उ दिङयइ नामक वृक्ष को काटने में असमर्थ होकर परेशान होता है

तब का फ्रैइट नामक पक्षी उनके पास आकर यह भविष्यवाणी करती है कि बाघ को मारकर ही इस वृक्ष की कटाई संभव है। का फ्रैइट की बात मानकर मनुष्य उ दिङयइ को काटने में सफल हो जाता है.

१२. छिपे खजाने- खासी कथा 'उ मावलिहपौह' में यौइगहरियाङ नामक रानीअपने पति की मृत्यु के पश्चात राज्य छोड़कर अन्यत्र बस जाती है। वह अपना सारा धन एक गुफा में छुपा देती है? यह मान्यता है कि उसका पालतू नाग उस गुफा में रहकर उसके घर की रक्षा करता है।

१३. दण्ड के रूप- 'उ मासी' नामक कथा में बैल, कौवा के बहकावे में आकर ईश्वर के संदेश को बदल देता है। यह मनुष्य को गलत संदेश देता है। ईश्वर बैल के इस कुकृत्य पर दण्ड स्वरूप उस लाठी से मारते हैं जिसके कारण उसके ऊपर के दाँत टूट जाते है। बहकाने वाले कौवे को भी ईश्वर कालिख भरे घड़े में रखकर कौवे को काला और कुरूप बना देते है।

१४. कैद – खासी कथा 'का माय नौङउम' में का माया नौङउम महादैम के राजा के कैद में रहती है। उसका पति उसे छुड़ाने के लिए महादैम के राजा से युद्ध करता है। युद्ध में उसका पति मर जाता है, का माया भी उसके साथ अपने प्राण देती है।

बच निकलना तथा पीछा करना- 'का स्एम नौङतारियाइ' कथा में नौङतारियाइ राज्य में सुफाई लोग आक्रमणकरते हैं। जब वे नौङतारियाइ की सीमा पर पहुँचे तो वहाँ की रानी को यह आभास हो गया कि उसके योद्धा आक्रणकारियों का सामना नहीं कर पायेंगे। वह अपनी प्रजा के साथ अपना राज्य छोड़कर चली जाती है। इसके बाद भी सुफाई लोग उसका पीछा करते रहे। एक दि उन्होंने नौङतारियाइ की रानी के ठिकाने का पता लगा लिया और जिस गुफा में यह छुपी हुई थी उसे नष्ट कर दिया।

१५. पतिव्रता, सतीत्व तथा ब्रह्मवर्य- 'का माया नौङउम' कथा में का मामया महादैम राजा के राज्य में ले जायी जती है। वहाँ वह महादौम के राजा से दूर रहने का वादा लेती है और अपने सतीत्व को बनाए रखती है। 'का स्एम जितलाखाइ' कथा में का स्एम जितलाखाइ मैदानी भाग के सौनिकों द्वारा पकड़े जाने पर अपने सतीत्व को बचाने के लिए आत्मा का रूप धारण कर लेती है।

१६. यौन संबंध- 'उ मानिक राइतौङ' कथा में का लिइमाकाव नामक रानी, राजा की अनुपस्थिति में उ मानिक राइतौङ से अवैध संबध रखती हैं।

१७. प्रतीकात्मकता – खासी में उ थ्लैन के बारे में यह मान्यता है कि यह एक आमानवीय शक्ति है जो मनुष्य का खून मिलने पर सम्पति देता है। उ थ्नैन को आज तक किसी ने नहीं देखा अतः यह दूसरों का नाश कर सम्पति प्राप्त करि वाले लोगों का प्रतीक मात्र है।

१८. प्राणों की अन्यत्र स्थिति- 'उ स्एम मादुर मास्कुत' कथा में राजा नियाङ एक शक्तिशाली राजा था उसके प्राण उसकी आँतों में बसे हुए थे।

१९. सात की रूढ़ संख्या का प्रयोग- 'उ लोम सौहपैतलैङ' कथा के अनुसार ईश्वर ने स्वर्ग में बसे सोलह परिवारों में से सात परिवारों को धरती पर भेजा। यह मान्यता है कि इन्ही सात परिवारों से खासी- जनजाति का विकास हुआ। 'उविय वाद उ पू हन्दैत' कथा में पंखों वाले सात व्यक्तियों का वर्णन मिलता है जो मूर्ख लड़के को स्वर्ग ले जाते है।

२०. आलसी- खासी भाषा के 'उ आल्हिया' कथा में एक आलसी व्य्कि का वर्णन है। वह दिन भर सोता रहता था। एक दिन उसके गाँव में आक्रमण हुआ। पत्नी के आग्रह करने पर भई आलस्य के कारण वह नहीं उठा। आक्रमणकारी उसके घर में घुस आए। जब उसने अपने मुँह पर से चादर उठाया तो आक्रमणकारी ने तलवार से काटकर उसको मार दिया।

उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि खासी लोककथाओं में अनेक कथानक रूढ़ियों अथवा अभिप्रायों का प्रयोग मिलता है जिनका उल्लेख भारतीय लोकसाहित्यवादों ने किया है। खासी लोककथाओं में धर्मगाथा अभिप्राय, पशु-पक्षी विषयक अभिप्राय, वर्जन विषयक निर्देशन, दण्ड, कैद, यौन, प्राणों की अन्यत्र स्थिति, सात की रूढ़ संख्या का प्रयोग, चरित्र की विशेषताएँ आदि कथानक रूढ़ियों का उल्लेख किया गया।

ख्याति के हकदार

उषा किरण टिबडेवाल

'में आई कम इन सर' ...दरवाजे के पास खड़ी मैं अपनी उखड़ी सांसो को संयत कर रही थी और मन ही मन में प्रैक्टिस कर रही थी कि मुझे किस तरह रूम नंबर ६२६ में रूके उन तीन व्यक्तियों के सामने पेश आना है।

जब मुझे आर्डर मिल कि रूम नंबर ६२६ में तीन बहुत विशिष्ट अतिथि रूके हुए हैं और मुझे उन्हें अटेंड करना है, मैं बहुत घबरा गई। पता नहीं कैसे होंगे वो। विशिष्ट अतिथियों के बहुत किस्से सुन रखे थे मैंने। रश्मि के साथ तो बहुत बुरा हुआ था। बडी मुश्किल से अपनी इज्जत बचाकर भागी थी वहा मुझे लगा आज मेरा नंबर है। अब क्या करूँ, नौकरी करनी है तो आर्डर भी मानने ही पड़ेगे। अब देखा जाएगा जो होगा। ज्यादती तो करने नहीं दूंगी उन लोगों को अपने साथ।

शांत होकर मैने डोर बेल बजाई।

में आई कम ईन सर?

यस कम इन मैडम। जितनी मीठी आवाज है उतना ही सुंदर चेहरा है आपका.... उनमें से एक बोला मेरा दिल जोर से धड़का। आखिर रोमियों छाप ही है। मुझे लगा कि मैं भाग जाऊं, लेकिन फिर मैने खुद को संभाला और खाने के व्यंजनों से भरी टेबल अंदर लाते हुए बोली- डिनर इन रेडी सर।

ओह, श्योर चार्मिंग लेडी। शेखर, मुझे तो जोरों से भूख लग रही है। खाना सर्व करवाते हैं. डिस्कशन तो होते रहेगा।

जैसा तुम चाहो नीतीश।

और मैं उन लोगों के लिए प्लेट तैयार करने लगी।

बीच-बीच में वह मुझसे भी हल्का-फुल्का ममजाक कर रहे थे और मैं शालीनता से मुस्करा कर उन्हें उत्तर दे रही थी।

तीनों ने जब खाना शुरू किया, मैं उन्हें ध्यान से देखने लगी। उम्र में ज्यादा बड़े नहीं थे तीनों। पैंतालीस तक के होंगे। लेकिन तीनों ही सुंदर, स्मार्ट. इज्जतदार घराने के लग रहे थे। मैने सुना था, तीनों ही अरबपति है, कितने ही मिनिस्टर उनके आगे पीछे डोलते हैं। देश की इकोनॉमी पर उनका अच्छा खासा प्रभाव है। तीनों पुराने दोस्त काफी

दिनो बाद मिले हैं। क्या पता कोई बहुत गहन बातचीत है या फिर सिर्फ तफरीह है।

मैं इसी उधेड़बुन में थी और उनका खाना खत्म हो गया।

मुझे लगा, अब कोई ना कोई मेरा हाथ पकड़ने वाला ही है।

लेकिन भगवान का लाख-लाख शुक्र है, ऐसा कुछ नहीं हुआ।

बल्कि नीतीश जी बोले.....थैंकर चार्मिंग लेडी, आपने बहुत अच्छे से हमें खाना खिलाया आपकी मीठी आवाज और कोमल हाथों ने तो खाने का स्वाद दोगुना कर दिया। हम बहुत आभारी हैं. आपने हमारी बहुत सेवा की। बाकी दोनों भी मुस्करा रहे थे और उनकी हां में हां मिला रहे थे।

मैं अभिभूत थी। ऐसे सफल व्यक्तियों की जो छवि मेरे दिमाग में बनी हुई थी. आज वह ध्वंस हो गई। श्रद्धा से मेरा सर झुक गया।

सचमुच ख्याति के उच्च शिखर तक पहुंच तीनों व्यक्ति सहीं मायनों में ख्याति के हकदार थे। क्योंकि वो सिर्फ पैसा कमाना ही नहीं, दिल जीतना भी जानते

वर्तमान दौर में भुमंडलीकरण के कुछ पहलु

डॉ. विजय कुमार

अतिथि प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, नेहू

बीसवीं सदी का अंतिम दशक जिसे आमतौर पर वैज्ञानिक और तकनीकी विकास के उपलब्धि के बतौर देखा जाता है वह भारत में ही नहीं अपितु वैश्विक पटल पर भी एक संक्रमण का दौर रहा है, आज जब यह प्रतीत हो रहा है कि इतिहास एक नई करवटें ले रहा हैं जहाँ हमारे जीवन जीने के तरीके में, सोचने-समझने के ढंग में एवं सम्पूर्ण जीवन स्थितियों में तकनीक मीडिया और बाजार के सहारे हमारे जीवन में घुसपेठ कर चुका हैं जहाँ कुछ भी निजी नहीं रहा है सब कुछ 'बिग बॉस' के नजर में है ऐसा दिखाया-बताया जा रहा है, यह तय है कि हर नागरिक के जीवन को तकनीक, मीडिया और बाजार की शक्तियाँ ही परिभाषित कर रहीं है, परिणामस्वरूप एक और विज्ञान, खोज और तकनीकी के जरिये मंगल ग्रह की ओर देख रहा है उसके लिए मीडिया में नित नए दावे और खबरों को परोसा जा रहा है तथा सांस्कृतिक-प्राकृतिक विरासत के स्तर पर आपसी हिंसा, विद्वेष, घृणा को बढ़ावा दिया जा रहा हैं, भूमंडलीकरण ऐसी परिस्थितियों में निर्मित हुई और विकसित होती हुई एक जटिल अवधारणा है।

वर्तमान दौर में भूमंडलीकरण के परिचय की जरूरत नहीं रही लेकिन इसकी चर्चा करना आवश्यक हैं, 'भूमंडलीकरण अपेक्षाकृत एक नया पद है जिसके चलन की शुरूवात को अस्सी दशक के अंतिम वर्षों से माना जा सकता है' ये वर्ष अर्थव्यस्था की दृष्टि में असंतुलन के वर्ष रहें हैं, जिसकी चर्चा करते हुए अभय कुमार दुबे लिखते है "आजादी रात के १२ बजे मिली थी, लेकिन इसके तकरीबन ४४ साल बाद जो सुबह आई, उसने एक नयी उद्योग नीति की घोषणा की और बने-बनाये ढांचे को एक ही झटके में अवशेष में बदल दिया, इसी दिन दोपहर के बाद संसद में नया केन्द्रीय बजट शुरू हुआ जो राजनीती के बजाए उसे नियंत्रित करने की इच्छा से लैस था. चार दशक से ज्यादा की अवधि में जिस राष्ट्रीय राजनीतिक-सामाजिक संस्कृति की रचना हुई थी एक पल में उसकी बागडोर ऐसे हाथों में चली गई जो शुद्ध रूप से भारतीय हाथ नहीं थे.यह भारत के ग्लोबलाइजेशन भूमंडलीकरण की शुरूवात थी" (अभी कुमार दुबे, भारत का

भूमंडलीकर, पृष्ठ-२१)

आज भूमंडलीकरण एक सर्वव्यापी स्थिति हैं. जो जीवन के हरेक क्षेत्रों पर किसी न किसी प्रकार से अपने जल में किये हुए हैं. प्रारंभ में केवल अर्थजगत से जुडी यह प्रक्रिया आज जीवन के दैनिक व्यवहार में हस्तक्षेप कर रहा है जो सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक भी है. भारतीय परिदृश्य में भूमंडलीकरण को 'वसुधैव कुटुम्बकम' से भी जोडा जाता है. लेकिन ध्यान योग्य तथ्य है कि वसुधैव कुटुम्बकम जहाँ माननीय सम्बन्धों के संदर्भ में अपने अर्थ को द्योतित रहा है वहीं भूमंडलीकरण खुली अर्थव्यवस्था के तहत विश्व-बाजार के जरिये संचालित-नियंत्रित होने वाली प्रक्रिया है. कहा जाता है कि भूमंडलीकरण में पूरा विश्व सिमटकर एक 'गाँव' बन गया है और इसको 'इन्टरनेट' के जरिये एक जगह किया जा रहा है या करते हुए दिखाया जा रहा है. आज सुदूर गांवों में इन्टरनेट की सुविधा ने एक हद तक संपर्क-संबंधी दुरी को तो खत्म करने का प्रयास किया ही है. इसके बावजूद हम एक ऐसे दौर में पहुच गए है जहाँ आर्थिक प्रगति के नाम पर हमारे चारों ओर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का जाल बिछाया जा रहा है. नई पूंजी और तकनीक से निर्मित इस सभ्याता में सब कुछ भव्य और लुभावना दिखाया जा रहा है. जिसको परोसने के लिए २४ घंटे चलने वाले चैनल है.बेहद तात्कालिक एवं क्षणिक लगने वाले विज्ञापनों ने आम जन के सोचने-समझने की क्षमता को कुंद कर दिया है जिसकी बागडोर बाजार के हाथ में हैं और उसको शह देने का कार्य राजनीति कर रही होती हैं. भूमंडलीकरण के दौर में प्रश्न हैं कि क्या केवल आर्थिक प्रगति से सब कुछ सही हो जाएगा? या फिर इस आर्थिक प्रगति में सामाजिक हित भी होगा? विकास को मानवीय चेहरा देने की कोशिश के लिए जरूरी है की मानव समाज के सामाजिक हितों का भी ध्यान रखा जाये जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली,पानी, हवा, मकान और सुचना के अधिकार जैसी मुलभूत जरूरतें सभी नागरिकों के लिए पूरी हो.

प्रश्न है कि भुमंडलीकरण की संस्कृति में बाजारवाद और उपभोक्तावाद कैसे अपना योग दे रहें हैं? मीडिया और विज्ञापन कैसे इसके हथियार बनकर सामने आये है? गाँव की जगह शहर और नागरिक के स्थान पर उपभोक्ता की सत्ता को कैसे अंतिम रूप प्रदान किया जा रहा है? यह सब देखना और जानना जरूरी हो गया है और समकालीन हिंदी कहानी इसको लेकर क्या सोचती हैं. यह देखना भी नितांत आवश्यक है.

साहित्य और संस्कृति अधिरचना के अंतर्गत माने जाते हैं, भुमंडलीकरण को एक आधार माना सकता है. क्योंकि इसने केवल अर्थव्यवस्था में ही अमुल्चुल बदलाव नहीं लाये बल्कि सामाजिक और सांस्कृति ताने-बाने पर भी पर्याप्त असर डाला है. ऐसी स्थिति में साहित्य में कुछ ण कुछ परिवर्तन घटित होना लाजिमी है. कहानी परिदृश्य में इस परिवर्तन को देखना और भी ज्यादा जरूरी हैं. क्योंकि कहानी विधा अन्य विधाओं की अपेक्षा कहानी सुगमता की वजह से ज्यादा स्वीकार्य है और वह बहुतायत संख्या में

लिखी और प्रकाशित भी हो रही हैं. कहानी के इस बदले यथार्थ से टकराहट होने पर कैसी स्थिति उत्पन्न होती है, यह देखने लायक है. भुमंडलीकरण की संस्कृति ने इसमें कौन से परिवर्तन किये इसे दर्ज किया जाना चाहिए. आज विज्ञापन ने सही और गलत के फर्क को मिटा दिया है. जो जरूरी वास्तु या खबर नहीं है उसे जरूरी बनाकर पेश किया जा रहा है. बाजारवाद इस विज्ञापन आधारित उपभोक्तावाद को फैअल कर बाजारवाद को स्थापित कर रहा है. उपभोक्तावाद तात्कालिकता पर बल देता है जो संवेदना को उतेजना में बदल देती है और इस तथ्य को समकालीन कहानी ने बखूबी पकड़ा है.

हिंदी कहानी पर भुमंडलीकरण की संस्कृति के प्रभाव को सबसे ज्यादा व्यक्त करने वाली कहानियों में अखिलेश की कहानी 'जलमडरूमध्य', संजीव की कहानी 'ब्लैकहोल', ओम शर्मा की कहाँ 'घोड़े', उदप्रकाश की कहानी 'पल गोमरा का स्कूटर', स्वयं प्रकाश की कहानी 'मंजू फालतू', नीलाक्षी सिंह की 'प्रतियोगिता', पंकज मित्र की 'क्विज मास्टर' आदि भुमंडलीकरण

के प्रारंभिक दौर की विशेष तौर पर याद की जाने वाली कहानियां रहीं है. उपभोक्तावाद की निरर्थकता, प्रतिस्पर्धा, मूल्यहीनता, निर्मम अवसरवाद और हिंसा, भुमंडलीकरण के वह चर्चित प्रभाब हैं जिन्हे ये कहानियां देखती हैं. नब्बे के दशक ने जो सामाजिक सच सामने पेश किया उसे ये कहानीकार अपनी कहानियों में सामने लाते है.

उत्पादन की प्रक्रिया में मुनाफे एवं उपभोक्ता को वर्चस्व मिला है, वहीं उत्पादनकर्ता को सर्वाधिक नुकसान हुआ हैं. सरकार द्वारा मल्टीनेशनल के पक्ष में बनाये गए कानूनों और श्रमिक संघों के कमजोर पद जाने के कारण मजदूरों के हित सबसे ज्यादा प्रभावित हुए हैं. तकनीकी विकास मजदूरों के लिए सहायक नहीं होकर उनके लिए उनके लिए मारक बन गया हैं.भुमंडलीकरण में यह स्पष्ट तौर पर उभरकर सामने आया की वर्तमान दौर का तकनीकी विकास सामाजिक जरूरतों को पूरा नहीं कर पा रहा हैं. क्योंकि उसके बुनियाद में कम्पनियों के प्रसार का जिम्मा हैं जो कम्पनियों के मुनाफा के लिए काम करता है. जयनंदन की कहानी 'विश्व बाजार का ऊंट' तथा मनोज रूपड़ा की कहानी 'साज-नासाज' में इसकी विकल्पलीनता की स्थिति है.

भुमंडलीकरण ने आज के समस्त परिवेश पर प्रभाव डाला है तथा उसके दायरे में साहित्य भी है. समकालीन कहानीकारों की ऐतिहासिक दृष्टि भुमंडलीकरण के इस मूल्यहीनता के दौर में उत्पन्न नई चुनौतियों और आगामी संकट को उसकी पूरी जटिलता के साथ पकडती हैं. समकालीन कहानी की इस उपलब्धि को लेकर मधु संधू लिखती है "कहानी में जीवन में घुसे बाजारवाद का शायद ही कोई पहलु अनछुआ रहा हो. यह बाजारवाद रिशतों में घुसपैठ कर रहा है. इसने निजी/बहुराष्ट्रीय कम्पनी के अधिकारी/कर्मचारी को रोबोट बना दिया है. नारी को कमोडिटी में बदलने के चक्कर में हैं. धर्म और स्वास्थ्य के नाम पर इस बाजारवाद को सर्वाधिक भुनाया जा रहा है." (कहानी और

बाजारवाद, कथाक्रम, अप्रैल-जून २००७, पृष्ठ-७०)

भुमंडलीकरण के कारन वर्तमान में एक सकारत्मक परिवर्तन यह देखने में आता है कई जो स्थितियां पहले पृष्ठभूमि में थी या हाशिये पर थी वे मुख्य भूमि पर आने लगीं. इस समय के कहानीकारों में उदय प्रकाश, अखिलेश मनोज रूपडा, राजू शर्मा, नीलाक्षी सिंह, पंकज मित्र, हरनोट,अल्पना मिश्र, महूआ माजी, रवि बुले, ओमा शर्मा इत्यादि प्रमुख हैं. उदाहरन के लिए उदय प्रकाश की कहानी 'पालगोमरा का स्कूटर' विज्ञापन जगत में प्रयुक्त स्त्री छवि को भुनाने का प्रकरण आता हैं. वैसे यह कहानी है. यह वाजारवाद-उपभोक्तावादी समाज में पनपी मूल्यहीनता, अनैतिकता और महत्वकांक्षा और उसकी परिणति पर व्यंग्य भी करती हैं. इसी प्रकार नीलाक्षी सिंह की कहानी 'प्रतियोगी' में पति-पत्नी के सम्बन्धों के बीच बाजार की घुसपैठ हो गई हैं.काशीनाथ सिंह की कहानी 'कौन ठगवा नगरिया लुटल हो' भी इसी संदर्भ को प्रस्तुत करती है. बाजारवाद की अभिव्यक्ति उपभोक्तावाद में होती है. उपभोक्तावाद निरंतर उपभोग पर बल देता है. वह छद्म और तात्कालिक असंतुष्टि पर जोर देता है. उपभोग की आकांक्षा की पूर्ति के लिए आदमी निरंतर उपभोग की एक बाद दूसरी वस्तु खरीदता है. उपभोक्ता समाग्री द्वारा प्रदत संतुष्टि क्षणिक होती है लेकिन उसके द्वारा पैदा की गई आत्मछलनाबड़ी होती है. उपभोक्ता सामग्री एक विशिष्टता बोध को जन्म देती है,समाज से अलग होकर खास दिखाई देने की विशिष्टता.उपभोक्ता सामग्री किस प्रकार विशिष्टता बोध को पैदा करती है तथा उसकी रक्षा के लिए प्राणपन से लगा रहता है इसकी अभिव्यक्ति संजय खाती की कहानी 'पिंटी का साबुन' में देखने को मिलती है.

अब तक मीडिया को लोकतंत्र का पहरूआ समझा जाता था और उसको लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ के रूप में बताया जाता रहा है. मीडिया का काम समाज के बुराईओं को सामने लाने का होता है. वह जनसरोकार से लैस तथा सत्तातंत्र के प्रति जनता के प्रतिरोध का माध्यम रहा है भुमंडलीकरण की प्रक्रिया के त्रिव्त्र होने तथा जीवन-जगत के प्रति दृष्टिकोण के सर्वत्र प्रसार होने के साथ ही वह आज की तारीख में जनता की आवाज बनने की बजाए कॉर्पोरेट की आवाज बनकर रह गई है.

लोक-संस्कृति का पुनर्जागररण

डॉ. श्यामबाबू शर्मा

८५/१ अंजलि काम्प्लेस शिलांग

मानव की सम्पूर्ण श्रेष्ठ अन्तवर्वृत्तियों के विकास का समुच्चय ही संस्कृति कहलाता है। यह इतिहास का वह सार-संकन है जिसमें बौद्धिक व शारिक आदित सभी प्रकार के श्रम, आत्मिक उपलबियाँ व अनुभव आदि सब सन्निहित हैं। संस्कृति अतीत का सार, वर्तमान की ऊर्जा एवं प्रेरणा तथा भविष्य के लिए दिशा संकेत है। संस्कृति का एक स्वरूप सार्विक (यूनिवर्सल) होता है, जो सम्पूर्ण मानव समाज के लिए स्पृहणीय, वांछित और उत्प्रेरण होता है। पर वर्ग-समाज में अधिकांशतः यह वर्ग- सापेक्ष रूप में चरितार्थ होती है। साथ ही उसकी स्थानीय/ क्षेत्रीय अभिव्यक्तियाँ होतीहै जो संस्कृति को विविधता प्रदान करती हैं। युगानुरूप विकाशसील मानव की संस्कृति भी निरंतर विकसित होती रहती है। विभिन्न संरक्षिकाऔर संवाहिका होती है संस्कृति का प्रादुर्भाव होता है। संस्कृति मानवीय इतिहास के प्राणतत्व की संरक्षिता और संवाहिका होती है जो उसके जीवन के आन्तरिक एवं बाह्य सभी पक्षों को अपने परिवेश में समाहित कर लेती है। जिन चेष्टाओं के द्वारा मनुष्य अपने जीवन के समस्त क्षेत्रों में उन्नति करता हुआ सुख-शान्ति प्राप्त करे वही उसके लिए भूषाभूत चेष्टाएँ कही जाती हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार मानव की श्रेष्ठ साधनाएँ संस्कृति के अन्तर्गत आती हैं। अँग्रेजी का 'कलचर' शब्द लैटिन भाषा में 'कुलतुरा' शब्द से निष्पन्न हुआ है जो 'पूजा करना' तथा कृषि- सम्बन्दी कार्य का बोधक है और जिसका लाक्षणिक अर्थ मनुष्य की बौद्धिक और मानसिक वृत्तियों को विकसित करना है। मानव- जाति के विकास में संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है। मैथ्यू अर्नाल्ड ने संस्कृति की परिभाषा एक व्यापक परिवेश में की है। उनके अनुसार संस्कृति (कल्चर) जीवनगत परिपूर्णता,सौन्दर्य और प्रकाश है। सौन्दर्य से ह्रदय पक्ष की मधुरता और प्रकाश से बुद्धि पक्ष की उज्जवलता का भाव प्रकट होता है।

बदलते वैज्ञानिक युग में संस्कृति का स्वरूप बदलता जा रहा है। गाँव नगरों में बदल रहे हैं। उद्योग, मिले, फैक्ट्रियाँ स्थापित किए जा रहे हैं। वैज्ञानिक तकनीकों से बेमौस्म कृत्रिम फसलें, फल आदि उगाए और पकाए जाने लगे हैं। पाश्चात्य आधुनिक

संस्कृत प्राचीन भारतीय संस्कृति के मूल रूप को बदल रही है। अब शायद ही कोई बैलगाड़ी. घोड़गाड़ी या साइकिल से चलता हो, इनका स्थान पेट्रोल और डीजल से चलने वाली रफ्तार गाड़ियों ने ले ले लिया है। मुनाफाखोरी ने संस्कृति को भी मॉल बनाना शुरू कर दिया. आज तो साम्राज्यवादी एकाधिकार और संकेन्द्रण ने संस्कृति की सारी मर्यादाएँ छिन्न-भिन्न कर दी हैं। एक ओर संस्कृति स्वयं दिन दूना रात चौगुना बड़ने वाला व्यवसाय है, दूसरी ओर मुनाफे की व्यवस्था की सुरक्षा और सुदृढ़ीकरण का सबसे कारगर औजार भी है। वास्तव में संस्कृति पूरी तरह स्थिर कभी नहीं होती है। हर बदलती हुई संस्कृति को मूल्यों तथा निष्ठाओं के बीच निरन्तर चुनाव करने पड़ते है। भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से बड़े बदलाव आते रहे है। सिन्धु सभ्यता लुप्त हो कर भी धार्मिक तथा सामाजिक व्यवस्था पर सम्भव है। भारतीय जनमानस अपना मूल स्वरूप खोये बगैर प्रभावों को भी समाविष्ट करता रहा। वैश्वीकरण की वर्तमान प्रक्रिया ने इस चुनौती को गंभीर बना दिया है। आज हम विभिन्न सांस्कृतिक मूल्यों में उचित का चुनाव नहीं कर पा रहे है। पश्चिम का उपभोगवाद हम पर छा गया, परन्तु वहाँ का वैज्ञानिक दृष्टिकोण हम नहीं अपना पाये। 'विश्वयान' के इस युग में हमारा लोक-जीवन, सांस्कृतिक मूल्य,धार्मिक विश्वास तथा परम्पराएँ इसकी चपेट में हैं।

उत्तरोत्तर विकास के साथ-साथ लोगोंके जीवन में पश्चिमी सभ्यता बलबती होती गया। हमारी परम्परागत संस्कृति का क्षरण होता गया। घर-परिवार की संयुक्त व्यवस्था चरमराने लगी। बच्चे माता-पिता के साथ रहने लगे। नगरीकरण और औद्योगिककरण के परिणामस्वरूप पति-पत्नि दोनों कामकाजी हो गये तथा बच्चों के लिए लोककथाएँ दुश्वार हो गयी। कानवेंट की शिक्षा तथा स्कूल बैग केबोझ ने इसकी मुस्कान छीन ली। ये दादी-नानी के लाड़ प्यार तथा उनकी कथाओं के बजाय टॉम एण्ड जैरी के बीच उलझ गये। टी.वी. ने अनेक कार्टून चैनल उपलब्ध करा दिये। अब एक अबोध शिशु ईडियट बॉक्स (टी. वी.) का क्रेजी हो गया। वह खेलना-कूदना भूल गया। गाँव-देहात में ग्रामीण जन विभिन्न संस्कारों और ऋतुओं में गीत गा-गाकर गन-मन का मनोरंजन किया करती हैं। सोहर, जनेऊ, विवाह, झूमर और वैवाहिक परिहास के गीत, गवना,जँतसार, निर्गुण, पुरबी, रोपनी तथा सोहनी के गीत। संध्या समय तथा राति के पिछले प्रहर में स्त्रियाँ भजन गाती है जिन्हें क्रमशः 'संझा' और 'परहाती' कहते हैं। इनमें ईश्वर की स्तुति होती है। वर्षा, वसंत आदि ऋतुओं के आन पर जन-जीवन में जो नवीन उल्लास उत्पन्न होता है, उसकी अबिव्यक्ति भी लोगकीतों में पायी जाती है।

पूँजीवादी संस्कृति के आगमन के साथ ही लोकगीतों का धीरे-धीरे विलुप्तीकरण होता गया। युवा पीढ़ी इन गीतों में रूचि नहीं रखती। पॉप म्यूजिक और डी.जे जैसे अति आधुनिक संगीत ने इस लोक धरोहर का ह्रास कियाहै। दादी-मौसी के अलावा नयी पीढ़ी शादी-ब्याह और जन्म आदि तमाम संस्कारों के समय इनकोगाना अपनी तौहीन समझती है। आषाढ़-सावन के माह में जिस आल्हा को पूरे उत्तर भारत में ढोलक की थाप के साथ

वीर रस की ओजस्विता के साथ गाया जाता था अब वह देखने को नहीं मिलता है। युवा पीढ़ी को इसमें कोई रूचि नहीं है। 'बिरहा' का चलन समाप्त हो गया है। समय की करवट के साथ ये लोकगीत विलुप्त होते जा रहे है।

ग्रामीण जनता अपने दैनिक व्यवहार में सैकड़ो मुहावरों, पहेलियों, सुक्तियों और सुभाषितों का प्रयोग करती है। इनमें चिर-संचित अनुभूतज्ञान राशि भरी पड़ी है। इनके अध्ययन से हमारी सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं का चित्र उपलब्ध होता है। कुछ सूक्तियाँ नीति वचनों से ओत-प्रोत हैं। घाघ और भड्डरी की उक्तियोंमें ऋतु विज्ञान की बहुमूल्य सामग्री पायी जाती है। घाघ ने अपनी सुक्तियों के माध्यम से पशुओं की पहचान तक बतायी है। विश्वायन ने लोक-जीवन के इस पहलू पर कुठारघात किया है। आज का इंसान इन कथाओं को नकारने लगा है। वह अब पैसे के पीछे भाग रहा है। यद्यपि उसकीयरह चाह फलीभूत भी हुई, परंतु जिन्दगी के रेस में वह अपनी परम्परागत चिन्तना और धरोहरों को छोड़ता चला गया। जीवन के जो गूढ़ सूत्र इन छोटी-छोटी कहावतों में छिपे हैं उनका लाभ वह नहीं ले पा रहे है। इस पूरे क्रम में बुजुर्ग पीढ़ी भी अपना अस्तित्व खोती गयी, उसका अस्तित्व परिवार में 'न' के बराबर हो गया। इंसान संवेदनाहीन होता गया। कृत्रिमता उसके प्रत्येक क्रम में भासित होने लगी। बुजुर्गों के लिए वृद्धाश्रम तथा नाना-नानी आवास का प्रचलन आ गया। शिशु से लेकर युवा तक बड़ों के अनुभवों से वंचित रह गये और भूमंडलीकरण से समाज में एक विकृति पैदा कर दी।

लोक-नाटक के अंतर्गत गीत, नृत्य और संगीत की त्रिवेणी प्रवाहित होती है। ग्रामीण जन नौटंकी, रामलीला, भड़इती तथा चैतारथ को देखकर प्रसन्नता का जो अनुभव करते हैं वह अवर्णीय है। उत्तर भारत का 'कथक' और गुजरात का 'गरबा रास' प्रसिद्ध लोक – नृत्य हैं। मालवा में 'माच' नामक लोक-नृत्य प्रसिद्ध है इन लोक-नृत्यों और नाटकों की अलग पहचान थी। गुजरात का 'भवाई' लोक- नाटक, बंगाल का 'जात्रा' महाराष्ट्रा में तमाशा, ललित, गोंघल, बहुरूपिया और दशावतार मराठी रंगमंच के आधार है 'यक्षगान' दक्षिण भारतीय लोक-नाटकर का वह प्रकार है जो तमिल, तेलगु तथा कन्नड़ भाषा-भाषी क्षेत्र की ग्रामीण जनता में परचलित है। उत्तर भारत में विवाह के अवसर पर बारात चली जाने पर 'वर पक्ष' के यहाँ स्त्रियाँ पूर रात 'विवाह' का मंचन करती हैं। इसमें स्त्री ही दूलहा-दुल्हन बनकर विवाह का स्वाँग करती हैं। इसे स्थानीय भाषा में 'नकटउरा' कहा जाता है। इससेरात-भार जागकर वे घर और गाँव की सुरक्षा करती है, क्योंकि बारात में लगभग सारा पुरूष समाज चला जाता है। इस लोक-नाटक में महिलाएँ अपनी उन भावनाओं को भी व्यक्त कर पति हैं जो पितृ प्रधान समाज में नहीं कर पाती हैं। पुरूष का रूप बनाकर वे अपनी दबी भावनाओं को अबिव्यिकत देती हैं। 'नकटउरा' जैसे लोक-नाटक को युवा स्त्री- वर्ग ने पिछड़ा और अश्लील करार दिया। कठ-पुतली का नाच देखने के लिए गाँवों में हुजूम इक्टठा हो जाता था। समय की गति के साथ सब कुछ बदल गया। अब शायद ही कठपुतली नचाने वाले बचेहों। यदि कहीं

ऐसा कलाकार मिल भी जायेतो उसे दो जून की रोटी तक नसीब नहीं होती हैं, क्योकि उसकी यह कला आज के जमाने के अनुसार हाइटेक नहीं है। नाटक-नौटंकी, नृत्य, रामलीला आदि का भी यही हश्र हुआ। जनमानस डिस्कों, बारगर्ल की ग्लैमरस रातों में खाने लगा। उसे न तो मन की शांति मिली न ही स्वस्थ मनोरंजन।

संस्कृति के मानवीय और स्वाभाविक रूप नष्ट हो रहे हैं। संस्कृति के सृजनात्मक विकास की धाराएँ मोड़ी जा रही हैं। और यह काम मनुष्य में मिथ्या चेतनाके सृजन के माध्यम से हो रहा है। दुनिया के शक्ति समपन्न देशों ने अपने आर्थिक और सांस्कृतिक वर्चस्व की दिशामें मीडिया द्वारा एक अभियान छेड़ा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों तथा आर्थिक उदारीकरण ने शक्ति-समपन्न देशों की संस्कृति या अपसंस्कृति को तीसरी दुनिया के दोशों में घर-घर पहुँचना शुरू किया। भारत की यात्रा औपनिवेशिक संस्कृतिसे अपसंस्कृति तक पहुँची है। इस देश को पिछले तीन सौ सालों से एक जबर्दस्त सांस्कृति संकट का सामना करना पड़ा है. जिसने भारतीय मेघा को नष्ट किया है, व्यक्ति को विभाजित किया है और सामाजिक संरचना को दरारों से भर दिया है। भारत ने लंबे समय तक गुलामी की है जो कि समाजों को भीतर तक तोड़देती है और इंसान को इंसान से कुछ कमतर बना देती है वह एक नया व्यक्ति गढ़ देती है, जो आत्मकेनद्रित, स्वार्थी और मौकापरस्त व्यक्ति होता है। यह सब भारतीय समाज के साथ घटित हुआ है, जिसकी विष बेलें आज पूरे सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य को घेरे हुए हुए हैं।

भारत का सांस्कृतिक संकट गहरता जा रहा है। उसके मूल्यों में गिरावट आयी है। घरों के पूजा-कक्षों में, पर्वो-त्योहारों और वैयक्तिक- सामाजिक कर्म-काण्डों में संस्कृति और उससे गढ़ा गया मानस विगत सौ वर्षो से अपनी लीला दिखा रहा है। पश्चिमी जगत लगातार आपना आर्थिक और सांस्कृति का जहर अभ भारत के घरों में तेजी से घलता जा रहा है। पहली दुनिया यानी शक्ति- सम्पन्न देशों की श्रेष्ठता पर अब बहस या विमर्श की जरूरत नहीं जान पड़ती। 'बहुसंस्कृतिवाद' के साथ पहली दुनिया की मंडिया, शैलियाँ और रूचियाँ तीसरी दुनिया में पहले से हीं अधिक व्यापक और अधिक सम्पूर्ण रूप से अन्तर्निहित हो रही हैं।

पश्चिमी संस्कृति उपभोगको प्रमुख स्थान देती है तथा उपभोक्तावादी संस्कृति का पोषण कर रही है। यह संस्कृति अलीशान बंगले, देशी-विदेशी गाडियों और ग्लैमरसे जुड़े परिवार को प्रोत्साहित करती है, व्यक्ति को जीवन-मूल्यों से विरक्त करके अपनी स्वच्छंद जिन्दगी जीने को प्रेरित करती है। इसने लोगों के अन्द्र धन – लोलुपता का अतिरेकी उन्माद पैदा कर दिया है। सही- गलत किसी भी तरीके से व्यक्ति रातों-रात अनीर बनना चाहता है। जीवन-मूल्य उसके लि परिहास की बात बन कर रह गये हैं। जीवन के केन्द्र में अर्थ के आने से सामूहिकता का क्षरण होता जा रहा है और ऐसा आभआस होता है कि प्रगति की लोक अवधारणा कहींबहुत पीछे छूट गयी है। हम इस आयातित संस्कृति के संजाल में लगातार फंसते जा रहे हैं और इसे अपनाने में गर्व की

अनुभूति करते हैं। यह संस्कृति कितनी खतरनाक हो सकती है, इर पर विलियम रेमंड का कहना है- "यह समाज को दिग्भ्रमित कर देती है। सन् १९२० तक तो अमेरिका की एक विशाल पीढ़ी दिग्भ्रमित हो चुकी थी जो कि 'लंकियन क्लबों' की सदस्य थी। " नयी पीढ़ी के लिए जीवन मूल्य कोई मायने नहीं रखते। वह आज सांस्कृति दृष्टि से विरोधाभास और विसंगतियों के दो राहों पर खड़ी है। उसके लिए होली के गुलाल की बजाय वैलेंटाइनन डे की मस्ती में क्लबों और पार्टियों की उत्तेजक ध्वनि ज्यादा रूचिकर है। संस्कृति जिसमें शर्म, हया और आचार-संहिता का स्थान था. युवा पीढ़ी इन्हें धता बताकर स्वच्छंद 'फास्ट कल्चर' को पसंद कर रही है। अधिक नशा तथा रेवपार्टी, नू पार्टी के कल्चर से तापित समाज।

पश्चिमी संस्कृति ने विश्व पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। उभोगवादी प्रवृति ने व्यक्ति को उपभोक्ता संस्कृति का काय बना दिया है। यूरोप की सभ्यता संस्कृति भारतीय जन-मानस पर छाती जा रही है। भारत के बुद्धिजीवी के लिए पश्चि के सांस्कृतिक उपनिवेशवाद का खतराबहुत तेजी से उभरकर आया है। राजनैतिक रूप से स्वाधीन होकर भी हम अपने सांस्कृति व्यक्तित्व के प्रति उत्तरोत्तर त्वरित साधनों ने इस मोर्चे पर हमें बेध्य अधिक बना दिया है। आक्रमणकारी शक्तियाँ हमारी राष्ट्रीय निष्टा में कमजोरी टटोलकर उसी पुरानी नीत "बाँटो और राज करो" के अंतर्गत हमारे ऊपर अपनी पकड़ मजबूत करती जा रही हैं। आजाती के पूर्व देश के शीर्षस्थ कलाकार, नर्तक उदयशंकर ने एक फिल्म बनायी थी 'कल्पना' जिसमेन देश के कई अन्य प्रसिद्द कवि-संगीतज्ञों का भी योगदान था। इस फिल्म में भारत राष्ट्र की जो परिकल्पना उन्होंने अपने नृत्यों के माध्यमों से अंकितकी थी उसमे हिंदी भाषा, भारतीय वेश-भूषा, कलाओं और संस्कृति का वर्चस्व था। आज स्वतंत्र भारत में उनके ही कलाकार बन्धु-बान्धव अमेरिका द्वारा प्रवर्तित 'नयी विश्वव्यस्था' के सिद्धांत और व्यवहार दोनों के पक्षधर हो गये हैं।

सूचना संचार के विकास के साथ संस्कृति का संक्रमण तेज गति से हुआ है। पति-पत्नि का पवित्र रिश्ता जिसेवैदिक मान्यता प्राप्त है और हमारे सोलह संस्कारों में अक महत्वपूर्ण संस्कार है। पश्चिमीकरण क बोल-बाले के बढ़ते रहने के कारण इस पर वहाँ की कुत्सित नजर पड़ गयी परिणामस्वरूप यह दरकने लगा। वैधानिक प्रावधानों ने स्त्री-जाति को अधिकार ते दिलाये परंतु लगातार हस्तक्षेफ के कारण पति-पत्नीके बीच प्रेम की गर्माहट ठंडी पड़ने लगी। जिसका अति गंभीर परिणाम सामने आया। विवाहोत्तर संबंध बनने लगे, इन पर सामाजिक बहस होने लगी तथा इन्हेंकुछ तथाकथित समाज चिन्तक मान्यता भी देने लगे. सांस्कृतिक क्षरण की यह आँधी यहीं नहीं रूकी, समलैंगिक संबंधों खुली वैचारिकी। पश्चिमी सभ्यता –संस्कृति में लिंग परिवर्तन करवाना तथ ऐसे संबंधों पर कोई रोक-टोक नहीं है। वहाँ की काली छाप अब भारत में स्पष्ट दिखाई पड़ रही है। अब भला ऐसी सांस्कृतिक अपनाकर किन भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की रक्षा की जा सकेगी? मानवधिकार जैसे संगठन तर्क दे रहे हैं कि यह स्वतन्त्रता अनिवार्य है।

कितनी बड़ी विडम्बना है कि जब चरित्र का क्षरण होने लगेका तो भला सभ्यता संस्कृतिकैसेबची रह पायेगी। यह सब पश्चिमी जगत में चल सकता है, क्योंकि वहाँ पर पहले ही रिश्ते-नाते बहुत महत्व नही रखते थे। यहाँ विवाह एक संस्कार है ता इसमें पूरूष और स्त्री का होना अनिवार्य है।

परहित सरिस धर्म नहीं भाई के बजाय व्यक्तिपरकता पर जोर है। पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति का असर हम पर इतना हाबी होताजा रहा है कि हम देश- दुनिया की खबर तो जरूर रखते हैं परंतु अपने पड़ोसी की राजी-खुसी जानना मुनासिब नहीं समझते हैं। भूमंडलीकरण सांस्कृति छाप हमारी पूरी पीढ़ी पर पड़ रही है। भूमंडलीकरण हमारी उन सांस्कृतिक उपलब्धियों और मूल्यों को पृष्ठभूमि में डाल रहा है, जिन्हें अर्जित करने में युगों की साधना और तप छिपा है। मानव परिवारों की विशिष्टता को नष्ट कर किसी एक ताकत की मनोवांछित संस्कृति या अपसंस्कृति को दुनिया के घर-घर में पहुँचा रहा है। 'ग्लोबल विलेज' या 'विश्व ग्राम' बनने के साथ ही दुनिया के तमाम देशों में स्थूल वस्तुओं का आदान-प्रदान तो हुआ ही, सुक्ष्म जगत का आगमन और प्रसार पूरी दुनिया में होने लगा। धार्मिक मान्यताएँ देश विशेष की न हरकर भूमंडलीकृत हो गयी। मनुष्य की वफादारियों में टकराहट पैदा होनेलगी। भूमंडलीकृत मीडिया ने साधु-संतों का प्रचार खूब किया बहुराष्ट्रीय क्मपनियों जैसे टेली मॉल, स्काइशाप आदि ने गंडे- ताजबीज को महिमा्ंडित किया। प्राचीन काल से चले आ रहे जिन पाखंडों से हम लड़े थे वही हमे फिर प्रिय लगने लगे। ऱाशरित्न, अँगूठियाँ, रक्षा कवच आदि आँनलाइन मंगा लेने की सुविधाएँ शुरू की गयी। न्यूज चैनलों तक ने अंधविश्वासों को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। ऐसे अनगिनत कार्यक्रम हैं जिनसे धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँची है और उनके स्थान पर अंधविश्वास, ढोंग की फिर से प्रफुल्लित होने का अवसर मिला है। पूर्व काल में ऋषि-मुनि भिक्षा पर जीव- यापित करते थे। आज के तथाकथित धर्मगुरू स्यं तो सुख और ऐश्वर्य का जीवन जीते हैं परंतु शिष्य मण्डली से वैराग्यक की बाते करते हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर धार्मिक नेटवर्कों की संख्या और प्रसार में काफी बढ़ोतरी होती जा रही है। धर्म के फैलाव एवं मिशनों के प्रादुर्भाव से नये समुदायों की रचना की कोशिश की जा रही है। देश में इससे कठुता तथा संघर्ष बड़ा है। ऐसी धार्मिक अस्मिताओं कि रचना हो रही है जिनकी शक्ल-सूरत के बारे में अंदाजा लगाना कठिन हो गया है। असल में ये नयी अस्मिताएँ आध्यात्मिक और पारंपरिक न होकर राजनीतिक रूझानों वाली होती हैं। ये हिंसा से गुजेर नकरने वाली हैं, क्योंकि इसका अस्तित्व ही एक- दुसरे के प्रति नकारात्मक और टकराव के कारण आया। ये नये धार्मिक मठ समन्वय और अंतर्वेशन के बजाय बहिष्कार को जन्म देते हैं।

जीवन अनुभवों से प्राप्त जो विचार और संस्ककार एक पीढ़ी को देती है, वही परंपरा है। परंपरा मानव विकास का आधार और संयोजन भी है। परम्पराएँ अपने पूर्व काल की स्वीकृति विधियों. प्रथाओं तथा सामाजिक मान्यताओं को अभिव्यक्त करती हैं।

पीढ़ी- दर- पीढ़ी जिन सामाजिक बातों को मान्यता मिलती रही है वे सभी परंपरा के अंतर्गत आती है। स्थान, प्रदेश तथा देश –विदेश की रीतियाँ, रूढियाँ एवं जीवन प्रणालियाँ एक – दूसरे से भिन्न होती हैं। कभी- कभी तो ऐसा भी देखने में आता है कि जाति-जाति की परम्पराएँ पृथक हैं। असल में यह पुरानी पीढ़ियों से प्राप्त आदर्शोन्मुख जीवन-पद्धति है जो कालांतर में संस्कृति में रूपांतरित हो जाती है। समाज में समादृत परंपरा ही संस्कृति है। जीवन को व्यावहारिक, सुखमय और सोद्देशय बनाने के लिए ही परम्पराओं से प्राप्त विरासतका परिष्कार और परिमार्जन किया होगाथ उस जीव-प्रावाह को वर्तमान से समन्वित करके और भविष्य पर्यंत गतिमान तथा निर्दिष्ट करके खोज से प्राप्त जो निष्कर्ष निकले होंगे, वे ही जीवन सूत्र बनकर परंपरा के रूप में प्रस्थापित हुए होंगो।

संस्कृति संक्रमण तथा अधकचरापन सब कुच कुचले डाल रहा है। कुंठा, भय संत्रास, उपेक्षा स्वार्थ, अर्थ लिप्सा, भोग विलास में निपट अकेला मनुषय। कभी हम विदेशी कपड़ो की होली जलाते थे। पर अब तु लूटो और हम ठसक बघरारेंगे। भोजन उनके जैसा, पहनना ओढ़ना उदार का बोली – भाषा भिमंगई की और संस्कार गिरवी रख दिये। अमीर-गरीब की खाँई बढ़ी और बाजर-विकार की ताकत। भारत विकसशील है, किंतु यह विकास जिसने हमारी संस्कृति को प्रभावित किया है, हमारे पर्यावरण को भी प्रभावित कर रहा है। ज्ञातव्य है कि भारतीय संस्कृति और पर्यावरण परस्पर आश्रित हैं। यहाँ का किसान ॠतुओं के अनुसार फसलें बोता, उगाता और काटता है। स्त्रियाँ बोवाई, कटाई के गीत गाती हैं। उतना ही हमे देना भी होगा। यदि हम वनों को काटकर औद्योगिक प्रतिष्ठान बना रहे हैं, तो उसी अनुपात में वृक्षारोपण भी करना होगा। वाहनों से निकलने वाले धुओं को प्रदूषण मुक्त बनाना होगा। मृदा प्रदूषण को रोकने के लिये प्लास्टिक बैग, थैलों और बोतलों का प्रयोग बंद करना होगा। कृत्रिम वर्षा, परमाणु बम, आदि विस्फोटक हथियारों का निर्माण और प्रयोग रोकना होगा। वैज्ञानिक प्रयोगों में प्रकृति के साथ होने वाले खिलावड़ को बंद करन होगा। यह समय हमारी पुरातनता के जागरण का है। आस्थाओं के सृजन का है। और सर्वोपरिक यह कि साधारण से आसाधारण के गृहण एवं बनावट के कपट रूप के परित्याग का है। नेतृत्व के लिए नैतिक साहस ओर मानवीय गरिमा के आह्वान का है। हम जानते हैं कि इतिहास में ऐसा कोई सिद्धांत नहीं है जो हमें अतीत की व्याख्या, वर्तमान का समाधान और भविष्य का आकलन करना सिखाता हो. पर हम इतनी उम्मीद तो कर सकते हैं कि कुछ दिन बादत दुनिया और बेहतर होगी। संयम के तप से क्या नहीं हो सकता? बाबा तुलसी लिखते हैं – तपबल रचइ प्रपंच बिधाता। तपबल बिष्नु सकल जग त्राता।। तपबल संभु करहिं संघारा। तबबल सेषु धरई महिभारा।।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मूल सिद्धांत एवं प्राथमिक शिक्षा में परिवर्तन की आवश्यकताएँ

कृष्ण कुमार पाण्डेय

के.हि.सं., शिलांग

भारत ने, संविधान अधिनियम, २००२ (छ्यासीवां संशोधन) के अनुच्छेद २१ ए के माध्यम से, छह से चौदह वर्ष की आयु के बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया। इसके कुछ वर्षों बाद, बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार (आर. टी. ई।) अधिनियम २००९, के अंतर्गत पर्याप्त और समान गुणवत्ता वाली पारंभिक शिक्षा के अधिकार को निर्धारित किया गया। इन अधिनियमों की परिकल्पना बच्चों को शिक्षा प्रणाली के तहत समग्र रूप में लाने के लिए की गई थी और साथ ही, उच्च ड्रॉपआउट दर को रोकने के लिए, जिसने भारत के साक्षरता दर को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। हालांकि, प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर बच्चों का अपने कक्षा के अनुरूप शिक्षा के अर्जन के स्तर पर निराशाजनक पदर्शन जारी है जो संपूर्ण भारतीय शिक्षा प्रणाली को बदलने के लिए २१वीं सदी की उपचारात्मक शैक्षिक नीतियों की मांग करता है।

इन निराशाजनक साक्षरता के परिणामों के संबंध में सभी समस्याओं को दूर करने के लिए, भारत के केंद्रीय मंत्रिमंडल ने २९ जुलाई, २०२० को नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२० को अपनी मंजूरी दे दी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य पूरे भारत में एक व्यापक शैक्षिक ढाचा प्रदान करना है। देश में विद्यालय तथा उच्च शिक्षा प्रणाली में बहुप्रतीक्षित संरचनात्मक सुधार की आवश्यकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति वर्तमान में "साक्षरता के परिणामों" और "वांच्छित परिणामों" के बीच असंतुलन को स्वीकार करता है। इसलिए, नई नीति में संपूर्ण भारतीय शिक्षा प्रणाली के पुनर्मूल्यांकन और उन्नयन का प्रस्ताव है। इसके अलावा, पुनर्मूल्यांकन और उन्नयन के साथ, राष्ट्रीय शिक्षा नीति सीखने की प्रक्रिया के महत्व पर जोर देती है, जो पारंपरिक, सामग्री- आधारित रटकर सीखने की संस्कृति के बजाय समस्या-समाधान दृष्टिकोण को विकसित करता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति यह भी स्पष्ट करती है कि 'बच्चों' को न केवल पाठ्यक्रम आधारित पाठों को ही सीखना चाहिए बल्कि सीखने की पूरी प्रक्रिया से भी परिचित होना चाहिए

जिससे की वे विभिन्न परिस्थितयों में अपने ज्ञान को समृद्ध कर सकें।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति की दृष्टि और सिद्धांत

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का दृष्टिकोण बच्चों को 'वैश्विक सर्वोत्तम शिक्षा प्रणाली के लिए समान पहुंच' प्रदान करना है। इसके अलावा, राष्ट्रीय शिक्षा नीती अध्ययन- अध्यापन की पूरी प्रक्रिया को एक नई परिभाषा से परिभाषित करता है जिसके अंतर्गत "शिक्षा को अधिक अनुभवात्मक, समग्र, एकीकृत, खोज-उन्मुख, शिक्षार्थी- केंद्रित, चर्चा- आधारित, लचीला और मनोरंजक" बनाने के प्रयास पर बल दिया गया है" (राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०:३)। इस नीति के संदर्भ में मसौदा समिति के सदस्यों ने परिकलपना की एक लचीला, शिक्षार्थी- केंद्रित दृष्टिकोण अब तक के शिक्षण पद्धति के मुख्य घटकों, जैसे शिक्षक- केंद्रित, पाठ्यक्रम- आधारित, परीक्षा-उन्मुख रटने की संस्कृति को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करेगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अंतर्निहित सिद्धांत 'पाठ्यक्रमों के प्रति एक लचीलापन,कला और विज्ञान के बीच समन्वित दृष्टि, बहुअनुशासनात्मक शिक्षा, वैचारिक समझ पर जोर, नियमित रचनात्मक मूल्यांकन, समानता और समावेश, संसाधन दक्षता, एवं आवश्यकतानुरूप निरीक्षण और नियामक प्रणाली पर आधारित हैं।

शिक्षा में लचीलापन शिक्षार्थियों को पूर्व-निर्धारित पाठ्यक्रम आधारित शिक्षण के स्थान पर अपने रूचि- आधारित कार्यक्रमों को चुनने का विकल्प देता है। यह कदम कला बनाम विज्ञान, पाठ्यचर्या बनाम पाठ्येतर, या अकादमिक बनाम व्यावसायिक शिक्षा के बीच मौजूदा अलगाव को तोड़ने में मदद करेगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य बहु-विषयक शिक्षा के साथ, शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के बीच सभी प्रकार के हानिकारक पदानुक्रमों को विस्थापित करना एवं वैचारिक समझ तथा निर्णय लेने की योग्यता विकसित करना है। नियमित रचनात्मक मूल्यांकन का लक्ष्य योगात्मक मूल्यांकन को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करना है क्योंकि योगात्मक मूल्यांकन ने पूरे देश में एक हानिकारक और अनुत्पादक कोचिंग-संस्कृति को बढ़ावा दिया है। समानता और समावेशन का उद्देश्य प्रत्येक बच्चे की रचनात्मक क्षमता को उसकी संपूर्णता में सुनिश्चित करना है। २१वीं सदी के आवश्यक शैक्षिक बुनियादी ढांचे को मजबूत करने के लिए संसाधन दक्षता का उद्देश्य एवं 'हल्के-लेकिन-सख्त' निरीक्षण और नियामक प्रणाली कामकाज में अधिक पारदर्शिता लाने का प्रयास करेगी। इसके अलावा, यह नियामक प्रणाली नवाचार को बढ़ावा देने के लिए और अधिक स्वायत्तता प्रदान करेगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में निवेश को सकल घरेलू उत्पाद के ६ प्रतिशत तक बढ़ाने का भी प्रस्ताव किया है।

प्रारम्भिक शिक्षा एवं देखभाल

कई शोधो (उदाहरण के लिए, ग्रांथम-मेकग्रेगर एट अल २००७; गोस्वामी २०१९ देखें। से पता चलता है कि बच्चों के जीवन के पहले छह से आठ साल उनके मस्तिष्क के

लगभग पचहत्र प्रतिशत विकास के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। इसलिए, उस आयु वर्ग के प्रत्येक बच्चे के लिए अर्ली चाइल्डहुड केयर एण्ड एजुकेशन (प्रारंभिक बचपन देखभाल और शिक्षा) (ई.सी.सी.ई.) को व्यवहार में लाना अनिवार्य है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति शुरू में ही इस तथ्य को स्वीकार करता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार, भारत में कई बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण ई.सी.सी.ई. अभी भी उपलब्ध नहीं है, जिसके लिए तत्काल हस्तक्षेप और आर्थिक निवेश अनिवार्य हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि "ई.सी. सी.ई. सबसे बड़ा और सबसे शक्तिशाली साधन होग", जिसका अर्थ है कि सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित समूहों के बच्चों को अधिक ध्यान और देखभाल दी जाएगी। इसके अलावा, ई.सी.सी.ई. के प्रभावी कार्यान्वयन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि देश में २०३० तक ग्रेड। में प्रवेश करते समय प्रत्येक बच्चा विद्यालयी स्तर की शिक्षा के लिए तैयार हो।

ई.सी.सी.ई. ने सीखने की नींव को मजबूत कने के लिए पांच व्यापक क्षेत्रों की पहचान की है। क्षेत्र इस प्रकार हैं : ए) शारीरिक विकास, और ई) संचार और प्रारंभिक भाषा का विकास एवं साक्षरता, और संख्यात्मकता का विकास। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन.सी.ई.आर.टी) को ई.सी.सी.ई। के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए पाठ्यचर्या और शैक्षणिक ढांचे को विकसित करने का कार्य दिया गया है। एन.सी.ई.आर.टी को दो भागों में पाठ्यक्रम विकसित करना होगा। पहला ०-३ आयु वर्ग के लिए और दूसरा ३-८ वर्ष आयु वर्ग के लिए बच्चों के लिए।

प्राथमिक स्तर पर शिक्षण अभ्यास

समकालीन शैक्षिक वास्तविकाताएँ, विशेष रूप से प्राथमिकता स्तर पर, काफी हद तक राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रस्तावों के विपरीत हैं। प्राथमिक स्तर पर पढ़ाने वाले शिक्षकों ने कुछ ऐसी शिक्षण पद्धतियों को अपनाया है जो बच्चों के भाषाई विकास के लिए हानिकारिक है। इस तरह की पद्धति प्रारम्भिक साक्षरता विकास में बोलने एवं पढ़ने की क्षमता को प्राथमिकत और लेखन की क्षमता को द्वितीय सत्र कामानती रही है। यहां तक कि एन्यूअल स्टैट्स ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट (ASER), २००५ के बाद अपने एक वर्षीय राष्ट्रव्यापी साक्षरता सर्वेक्षणों में. जो बच्चों की सरल पाठ को पढ़ने और अंकगणितीय कौशल की क्षमता का आकलन करता है, लेखन मूल्यांकन शामिल नहीं करता है। इसी तरह, भारत सरकार द्वारा प्राथमिक शिक्षा नीतियों का प्रारूपण ज्यादातर बच्चे की पढ़ने और बोलने की क्षमता के मूल्यांकन पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, भारत में अंग्रेजी को दूसरी भाषा के रूप में संबोधित करते हुए, सरकारी एजेंसियां अंग्रेजी शब्दों के लिए वर्तनी निर्देशों की तुलना में अन्य साक्षरता कौशल पर अधिक ध्यान देती हैं। सरकारी अधिकारियों के मध्य भी यह धारणा है कि अंग्रेजी भाषा में एक बच्चे की केवल बोलने एवं पढ़ने की क्षमता वैश्विक अंग्रेजी समुदाय में एक स्थान सुरक्षित करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण दक्षता है, वर्तनी अथवा लिखने की क्षमता

बोलने के समक्ष गौण है।

बोलने एवं पढ़ने की क्षमता के अनुरूप लेखन कौशल को गौण समझना मुख्य रूप से एक गलत धारणा पर आधारित है। इस संबंध में गलत धारणा यह है कि लेखन का एकमात्र काम है भाषा की ध्वन्यात्मक प्रणाली को लिखित चिह्नों के माध्यम से प्रतिबिंबित करना है। दूसरे शब्दों में, लिखित प्रतीकों को आमतौर पर बोली जाने वाली भाषा का प्रतिलेखन माना जाता है। यह धारणा बीसवीं सदी के पहले कुछ दशकों में भाषाविदों के बीच विकसित हुई। उस काल के भाषाविद मुख्य रूप से भाषा के बोले गए रूप में रूचि रखते थे. जो उनके अनुसार स्वाभाविक और सहज था। हालांकि, १९६० के दशक के बाद से और नोम चॉमस्की की जनरेटिव भाषाविज्ञान के आगमन के साथ, पुराने विचार धीरे-धीरे फीके पड़ गए। नए अध्ययनों एवं साक्ष्यों ने यह स्पष्ट कर दिया कि लेखन भाषा को दृश्यमान बनाते हैं। बाद में, अन्य लिपि- आधारित शोध ने यह स्पष्ट किया कि एक लेखन प्रणाली किसी भाषा की ध्वन्यात्मक प्रणाली को बिना चिन्हित किए भी वाक्य रचना,, आकृति विज्ञान या शब्दार्थ के साथ प्रत्यक्ष पारस्परिक संबंध स्थापित कर सकती है। उदाहरण के लिए,चीन की एक प्रमुख भाषा मैन्डरिन की लिपि उस भाषा का ध्वन्यात्मक विवरण प्रस्तुत नहीं करती बल्कि स्वतंत्र रूप से अर्थों का निर्माण करती है।

प्राथमिकत शिक्षकों को यह समझने की आवश्यकता है कि लेखन को गौण मानने की संकीर्ण धारणा, जो कि किसी भी मौजूदा वैज्ञानिक साक्ष्य से रहित है, ने प्रारंभिक साक्षरता विकास के संदर्भ में एक बच्चे के संभावित परिणाम अर्जित करने को और अधिक कमजोर किया है।

इसके अलावा, प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को एक शब्द के अंदर अक्षरों के अनुक्रमों को रटने के स्थान पर वर्तनी के ध्वन्यात्मक और रूपात्मक गुणों से छात्रों को अवगत कराने के लिए एक पद्धतिगत दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। यह बहुत संभव है कि एक शब्द के भीतर विविध आंतरिक संरचनाओं के संपर्क में आने के बाद भी कई बच्चे बड़ी संख्या में शब्दों का उच्चारण करने अथवा सही से लिखने में असफल हो जाते हैं। इस स्थिति को दूर करने के लिए शिक्षकों को सांख्यकीय शिक्षण पद्धति सीखने की विधि बच्चों को स्वाभाविक रूप से संबंधित शब्दों के नियमित व्यवहार को सुनिश्चित करती है। यह विधि बच्चों पर एक ही प्रयास में या अक्षरों के एक ही क्रम को अलग-अलग याद करके एक शब्द के अंदर अक्षरों का शुद्ध क्रम सीखने के लिए दबाव नहीं डालती है। इसके विपरीत, बच्चों को नियमित अंतराल पर शब्दों से अवगत कराया जाता है और विभिन्न लेखन गतिविधियों में एक ही शब्द का उच्चारण करने अथवा लिखने का अवसर मिलता है। इन गतिविधियों में कविता लेखन, निबंध लेखन, कहानी लेखन, शब्द वाक्य और अनुच्छेद श्रुतलेख या किसी अन्य पाठ से पाठ की प्रतिलिप बनाना शामिल हो सकता है। (Saffran et al. Apel 2011)। इस प्रक्रिया से बच्चे शब्दों

की आंतरिक संरचना पर आवश्यक ध्यान देने लगते हैं इसलिए संबंधित शिक्षकों का यह उत्तरदायित्व है कि वे रटकर सीखने की आदत को प्रोत्साहित करने के बजाय बच्चों को सांख्यकीय शिक्षण पद्धति से सीखने के पर्याप्त अवसर प्रदान करें।

इसके अतिरिक्त कई अन्य विधियां या तकनीकें है जो रटने की विधि को प्रतिस्थापित करती हैं और बच्चों के साक्षरता कौशल में उल्लेखनीय रूप से सुधार करती हैं। न्यूनतम- संरचानात्मक सादृश्य एक ऐसी तकनी है जो बच्चों के लेखन की क्षमता को मजबूत करती है क्योंकि हम जानते हैं कि असीमित भाषाई अभिवव्यक्ति मूल रूप से समीमित भाषाई इकाइयों पर आधारित है। यह भाषाई इकाइयाँ हैं जो असीमित अभिव्यिकतयों को उत्पन्न करने के लिए भाषा-विशिष्ट, नियय- शासित क्रमपरिवर्तन और संयोजन लागू करती हैं। उदाहरण के लिए लड़का-लड़के, घोड़ा-घोड़े, बच्चा-बच्चे आदि के बहुवचन रूपों में – ए की समानता को न्यूनतम-संरचनात्मक सादृश्य तकनीक की विधि से स्पष्ट किया जा सकता है।

इसके अलावा, चूंकि भारतीय कई भाषाएं बोलते हैं और लिखने के लिए विभिन्न लिपियों का उपयोग करते हैं। इसलिए बच्चों को विभिन्न लेखन प्रणालियों के बीच कार्यात्मक और संचालन संबंधी अंतरों से अवगत कराना अनिवार्य है, उदाहरण के लिए, अंग्रेजी लेखन प्रणाली और तमिल प्रणाली के बीच का अंतर। इससे उभरते हुए साक्षरों को यह समझने में मदद मिलेगी कि प्रत्येक लेखन प्रणाली स्वयं में विशिष्ट है।

निष्कर्ष

हानिकारक शिक्षण पद्धतियों, जो हमारी प्राथमिक शिक्षा का एक अभिन्न अंग बन गई है, में तत्काल सुधार की आवश्यकता है। इसके अलावा, शिक्षकों को उन शिक्षण प्राथाओं को पूरी तरह से त्यागने की जरूरत है जो अनुपादक हैं और बुनियादी साक्षरता के विकास के लिए प्रतिकूल हैं। इसके बजाय. उन्हें नई तकनीकों को सीखना चाहिए जो वर्तमान वैज्ञानिक अनुसंधान के निष्कर्षों पर आधारित हैं, अन्यथा नई शिक्षा नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करना कठिन होगा।

संदर्भ

1. रोजर्स, हेनरी (१९९५) : "ऑप्टिमल ऑर्थोग्राफीज," इनः टेलर आई। ओल्सन डीआर (एड्स) स्क्रिप्ट्स एंड लेटरेसी। न्यूरोमाइकोलाजी एण्ड कॉग्रिशन, वॉल्यूम ७. पीपी ३१-४३, स्प्रिंग, ड्रॉर्ड्रेक्ट। https://doi.org/ १०.१००७/९७८-९४-०११-११६२- १३
2. सैफरन, जेनी आर, रिचर्ड एन. असलिन, और एलिसा एल. न्यूपोर्ट (१९९६) : "स्टटिस्टिकल लर्निंग बाइ ऐट-मन्थ्स ओल्ड इंफनट्स," विज्ञान, खंड २७४,संख्या ५२९४, पीपी १९२६-१९२८१
3. अपेल, केन (२०११) : "ह्वट इस ऑर्थोग्राफिक नॉलेज?" लैंग्वेज, स्पीच एंड हीरिंग सर्विसेज इन स्कूल्स, वॉल्यूम ४२, नंबर ४. पी. ५९२-६०३१
4. शिक्षा मंत्रालय (२०२०) : "नई शिक्षा नीति," नई दिल्लीः सरकारी प्रेस।

5. ग्रांथम- मैकग्रेगर, सैली, यिन बुन चेउंग सैटियागो क्यूटो, पॉल ग्लेवे, लिंडा रिक्टर, बारबरा स्टूप, और इंटरनेशनल चाइल्ड डेवलपमेंट स्टीयरिंग ग्रूप (२००७) : "विकासशील देशों में बच्चों के लिए पहले ५ वर्षों में विकासात्मक क्षमता," लैंसेट वॉल्यूम ३६९, नबंर ९५५५, पीपी ६०-७०
6. गोस्वामी, उषा (२०१९) : कॉग्निटिव डेवलपमेंट एंड कॉग्निटिव न्यूरोसाइंसः द लर्निंग ब्रेन, लंदनः रूटलेज।
7. जोशी, आर. मालतेश और सुजैन कैरेकर (२०१२) : "वर्तनीः विकास, मूल्यांकन और निर्देश," जी रीड (सं.), द रूटलेज कॉमपेनियन टू डिस्लेक्सया, लंदनः रूटलेज।

वन संरक्षण एवं पूर्वोत्तर भारत

चैताली दीक्षित

सहायक प्रवक्ता, जुलोजी, सेन्ट एंथोनी उ. मा. विद्यालय, शिलांग

वास्तु के अनुसार पूर्वोत्तर, ईशान कोण यानी देवस्थली मानी जाती है। सघन वन आच्छादित पूर्वोत्तर भारत अत्यंत मनोरम एवं रमणीक क्षेत्र है। विगत कई वर्षों में धीरे-धीरे यहां वनाच्छादित क्षेत्रफल में कमी पाई गई है। भारतीय वन नीति १९८८ के अनुसार भौगोलिक क्षेत्रफल और वनाच्छदित क्षेत्रफल का अनुपात ३:१ होना चाहिए. पूर्वोत्तर भारत में यह अनुपात अन्य भारतीय भौगोलिक क्षेत्रफल की अपेक्षा बहुत ज्यादा है पर विगत कई वर्षों में बढ़ती जनसंख्या एवं जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति हेतु जंगल काटे गए है, नए हाईवे, डेम्स, इंडस्ट्रीज,फैक्ट्रीज, मॉल्स एवं रिहायसी इलाकों के निर्माण के लिए वनाच्छादित जमीन को काटकर साफ किया गया है। इस प्रकार में हॉटस्पॉट कहे जाने वाले पूर्वोत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रों में ना सिर्फ पेड़ो को क्षति पहुँची है अपितु ५९ खंड। में पाए जाने वाले औषधीय पौधो,पशु पक्षियों एवं अन्य महत्वपूर्ण संसाधनों में भी कमी आई है डिफोरेस्टेंशन की प्रक्रिया में कई पशु पक्षियों का विस्थापन हुआ जिससे उनकी जनसंख्या में कमी आई और कभी-कभी यह जनसंख्या इतनी कम हुई कि कई जानवरों और पशु पक्षियों की प्रजातियाँ विलुप्तता के कगार पर खड़ी हो गई है। जंगलों को काटकर हाइवेज के निर्माण अक्सर हाईवेज के दोनों तरफ पहाड़ियों पर मिट्टी के कटाव से बारिश में भूस्खलन आए दिन होते रहते है इससे,वाहनों की आवाजाही में रूकावट आती रहती है।

देश के शीर्ष के पांच वनाच्छादित राज्यों में पूर्वोत्तर भारत के ही ३ राज्य आते हैं। पहले स्थान पर मिजोरम दूसरे स्थान पर अरूणाचल प्रदेश और तीसरे स्थान पर मेघालय आता है। इन तीनों राज्यों में आदित छेत्रफल क्रमशः ९०% ८६% एवं ७८ % हैं। भारतीय वन संरक्षण १९८७ के नवीनतम सर्वेक्षण २०१९ के अनुसार पूर्वोत्तर पूर्वोत्तर भारत के वन आच्छादित क्षेत्रफल में तकरीबन ७२० वर्ग किलोमीटर की कमी आई है हालांकि लोगों के पर्यावरण के प्रति जागरूकता एवं सरकार द्वारा बनाई गई वन संरक्षण नीतियों की वजह से विगत कुछ वर्षों में वनाच्छादित क्षेत्रफल में १.५६ % की वृद्धि भी पाई गई है।

इन वनों की अक्षुड़ता रखने के लिए इन वनो में सामान्यता बाहरी लोगों का आना जाना वर्जित माना जाता है। वैज्ञानिकों के मतानुसार शायद यह पवित्र वन आदिमानव के देवालय रहे हैं। इस प्रकार के वनों के अवशेष ग्रीस में भी पाए जाते थे, इन वनों के अवशेषों के अध्ययन से यह पता चला कि के। भाग को पत्थरों से घेरकर सुरक्षित रखा जाता था जिसे ग्रीक भाषा में टीमनस या कट ऑफ भी कहते है। अगर हम पवित्र बनो के इतिहास के बारे में जानने की कोशिश करें तो इसका अध्ययन करने वाले दो भारतीय वैज्ञानिक प्रोफेसर माधवगढ़ गेल और वटक १९७५ में इस निषकर्ष पर पहुँचे कि मानव मन ने अक्षुन यानी की परिल्पना लगभग ३००० से ५००० वर्ष ईसा पूर्व की है। जब आदिमानव शिकार एवं वन संसाधनों पर पूर्णतया निर्भर थे। उनके अनुसार पृथ्वी पर पाए जाने वाले सर्वप्रथम आदिमानवों का पूर्ण विश्वास वनों पर ही था उनकी मान्यता थी कि यही उन्हें जीवित रखे हुए है। इस कारण यह आदिमानव अपने को अनुग्रहित महसूस करते थे और अपने कृतज्ञता को दर्शाने के लिए यह वनों की एवं प्रकृति की पूजा एवं संरक्षण किया करते थे। पूर्वोत्तर भारत के मणिपुर, मेघालय, अरूणाचल और सिक्किम में पवित्र वनो की संख्या बहुत ही ज्यादा मात्रा में है जिन का क्षेत्रफल कुछ वृक्षों के समूह से लेकर कई हेक्टयर तक का भी हो सकता है। पूर्वोत्तर भारत की आदिवासी मान्यताओं एवं उनके पूर्वजों के इन मान्यताओं से धीरे-धीरे दूर होते जा रहे हैं। आधुनिकता की दौड़ में आधुनिक पीढ़ी नें अपने पूर्वजों की मान्यताओं की अवहेलना भी करनी शुरू कर दी है। मेघालय के पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले प्रकृति संरक्षण प्राचीन काल से आदिवासियों के संस्कृति का एक अटूट हिस्सा रहा है। इसके मूल में उनकी प्रकृति के ऊपर निर्भरता एवं प्रकृति के प्रति उनका सम्मान है। प्रकृति प्रेम सदियों से पाया गया है। कबीलों में रहने वाले लोगों के अनुसार उनके पूर्वोजों की मान्यता रही है कि इन पवित्र वनों से किसी भी प्रकार का कोई भी संसाधन बाहर ले जाने से। देवता को फिट होते है एवं उस व्यक्तिको और समस्त कबीले को सजा देते है। पेड़ पौधों पशु- पक्षियों झील और नदियां पाई जाती है इसके अलावा हमारे मेघालय में भी बहुत सारे तकरीबन ७० पवित्र वन है जिन का संरक्षण करते हैं क्योंकि इस माध्यम से वह अपने देवी-देवताओं की पूजा भी करते हैं। पूर्वोत्तर भारत में भी कबीलाई समूह अपने आस-पास पाए जाने वाले वनों का संरक्षण करते है और यह भारत की बहुत ही प्राचीन परंपरा रही है जिसका उल्लेख वैदीक ऋृचनाओं में भी मिलता है। पूर्वोत्तर भारत के आदिवासी परंपरा के हिसाब से वनों के। भाग को यह सोचकर संरक्षित किया जाता है कि इसमें उनके पूर्वजों और देवी-देवता का निवास है और इस माध्यम से वह अपने पूर्वजों एवं देवी-देवताओं से बात भी कर सकते हैं और उनके पूर्वज और देवी देवता उनकी रक्षा करते हैं।और इसमें किसी भी प्रकार का विध्वंसक कार्य वर्जनीय होता है और समय-समय पर वन के उस हिस्से की पूजा- अर्चना भी की जाती है। इस प्रकार के वनों को पवित्र वन समूह भी कहते हैं।

इन वनों की अक्षुड़ता रखने के लिए इन वनों में सामान्य बाहरी लोगों का आना

जाना वर्जित है। वैज्ञानिकों के मतानुसार शायद यह पवित्र वन आदिमानव के देवायलय रहे है। इस प्रकार के वनों के अवशेष ग्रीस में भी पाए जाते थे, इन वनों के अवशेषों के अध्ययन से यह पता चला कि। भाग को पत्थरों से घेरकर सुरक्षित रखा जाता था। जिसे ग्रीस भाषा में टीमनस या कट ऑफ भी कहते है। अगर हम पवित्र वनों के इतिहास के बारे में जानने की कोशिश करें तो इसका अध्ययन करने वाले दो भारतीय वैज्ञानिक प्रोफेसर माधवगढ़ गेल और वटक १९७५ में इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मानव वन अक्षुन यानी वर्जित वन की परिकल्पना लग-भग ३००० से ५००० वर्ष ईसा पूर्व की है जब आदिमानव शिकार एवं वन संसाधनों पर पूर्णतया निर्भर थे। उनके अनुसार पृथ्वी पर पाए जाने वाले सर्वप्रथम आदिमानवो का पूर्ण विश्वास वनों पर ही था उनकी मान्यता थी कि यही ईश्वर है और यही उन्हें जीवित रखे हुए हैं। इस कारण यह आदिमानव अपने को अनुग्रहित महसूस करते थे। और अपनी कृतज्ञता को दर्शाने के लिए यह वनों की एवं प्रकृति की पूजा एवं संरक्षण किया करते थे। पूर्वोत्तर भारत के मणिपुर मेघालय अरूणाचल और सिक्किम में पवित्र वनों की संख्या बहुत ही ज्यादा मात्रा में है जिन का क्षेत्रफल कुछ वृक्षों के समूह से लेकर कई हेक्टेयर तक का भी हो सकता है। पूर्वोत्तर भारत की आदिवासी मान्यताओं एवं उनके पूर्वजों के इन वन रख संरक्षण मैं योगदान बहुत ही सराहनीय है परंतु आधुनिक पीढ़ी ने अपने पूर्वजों के इन मान्यताओं से धीरे- धीरे दूर होते जा रहे है। आधुनिकता की दौड में आधुनिक पीढ़ी ने अपने पूर्वजों के इन मान्यताओं से धीर- धीरे दूर होते जा रहे हैं। आधुनिकता की दौढ़ में आधुनिक पीढ़ी ने अपने पूर्वजों की मान्यताओं की अवहेलना करनी भी शुरू कर दी है मेघालय के पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय में पढ़ने मेघालय के पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में पढ़ने वाले एहसिंह खतियाँग जो कि अपने पूर्वजो की वन संरक्षण की मान्यताओं के अनुयाई हैं उनके अनुसार पेड़ पौधे वन हम से अपनी भाषाओं में बाते करते हैं एवं स्वस्थ वातावरण में अपनी खुशी हाली को वह व्यक्त भी करते हैं। परंतु इन मान्यताओं का पालन आजकल की आधुनिक पीढ़ी नहीं कर पा रही है एवं उसकी अनदेखी भी कर रही है।समय रहते अगर हमने अपनी आधुनिक पीढ़ी को वन संरक्षण के प्रति जागरूकत नहीं किया एवं उसकी महत्ता को नहीं बताया तो वह वक्त दूर नहीं जब वनों एवं जगलों से यह आवाज आएगी....

ना रौनकरह गई है
ना चहचहाहट,
अपना ईमान बेच कर
खुद को अनीर बनाया
अब शर्मकर जैसा दर्द तो अंदर है
ऐसा दर्द हमारे अंदर भी
उस खुदा ने बनाया....

मेघालय में नेपाली कविता की विकास यात्रा

डॉ. बिक्रम थापा

बुद्ध भानु सरस्वती कॉलेज, शिलांग

'खस भाषा' तथा पार्वते भाषा के रूप में प्रचलित नेपाली न सिर्फ नेपाल की भाषा है अपितु भारत एवम पडोसी मुल्को में इसको बोलने और समझने वालों की संख्या अधिक है नेपाली भाषा का संबंध भारोपीय परिवार से है। नेपाली भाषा का लिखित इतिहास आज से लगभग १०५० वर्ष पुराना है। भूपाल दामुपाल के समय के दुललु शिलालेख में नेपाली भाषा के सबसे प्राचीन लिखित रूप पाये गये है। यह शिलालेख वि सं१०३८ में लिखा गया है। नेपाली भाषा का मौखिक रूप तो और अधिक प्राचीन है। नेपाली भाषा को घर-घर पहुँचाने का कार्य आचार्य भानुभक्त ने किया। उन्होंने बाल्मिकी रामायण का नेपली भाषा में अनुवाद करके नेपाली भाषा को लोक प्रचलित बनाया। नेपाली भाषा को लोकप्रिय बनाने में आचार्य भानुभक्त का बहुत अधिक महत्व है। भानुभक्त ने जनमानस को जनभाषा नेपाली में 'रामायण' लिखकर नेपाली भाषा को आम लोगो तक पहुँचाया।

भारत देश न सिर्फ भौगिलिक रूप से विविद है अपितु भाषिक रूप में भी विभिन्नता समेटे हुए है। एक सरकारी तथ्यानुसार भारत में १६५२ भाषाएँ प्रचलन में हैं। २४ भाषाओं को सवैधानिक मान्यताएँ प्रदान कर राजभाषा का दर्जा दिया गया है। भारत के संविधान के ७१ संशोधन के द्वारा नेपाली/ गोरखाली को आठवी अनुसूची में शामिल किया गया है। इस भाषा को भारत में बोलने की संख्या अनुमानतः १.६. करोड़ है। भारत के खासकर सिक्किम पश्चिम बंगाल और पूर्वोत्तर के राज्यों में नेपाली भाषा बोली एवं समझी जाती है।

सुदूर पूर्वोत्तर में बसा खूबसूरत मेघालय राज्य में नेपाली साहित्य के विकास का अध्ययन करने से पूर्व यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि गोरखाली (नेपली) का पूर्वोत्तर भारत में आगमन और स्थायी रूप से बसोबास करने के पीछे क्या कारण थे। भारतवर्ष में नेपाली जाति का आगमन आनादि काल से चला आ रहा है। भारत का नेपाल से संबंध पौराणिककाल से माना जाता है। वैदिक, पौराणिक, रामायण, महाभारत काल तक अटूट संबंध रहा है। कहा जाता है नेपाल का भू भाग काश्मीर से पूर्वोत्तर भारत के

कई राज्यों तक फैला हुआ था। अंग्रेजों ने राज्य विस्तार हेतु सन् १८१४-१६ में नेपाल पर आक्रमण किया। जिसे आंग्लो-नेपाली युद्ध के नाम से जाना जाता है। इस युद्ध में नेपाल को अंग्रेजो के हाथ मुँह की खानी पड़ी थी। ३ मार्च १८१६ को अंग्रेज और नेपाल बीच सन्धि हुआ जिसे सुगौली सन्धि के नाम से विख्यात है। अंग्रेजो ने नेपालीयों की वीरता और साहस को युद्ध के दौरान पहचान लिया था। इसलिए अंग्रेजो ने अपने फौज में नेपालीयों को सैनिक के रूप में भर्ती करना शुरू कर दिया। वही दूसरी ओर जो नेपाल का भूभाग खासकर उत्तर काश्मीर, पूर्व पंजाब, सिक्किम, उत्तर बंगाल, उत्तर प्रदेश के उत्तराचंल को भारत के अधिन सम्मिलित किया गया। सुगौली सन्धि के पश्चात नेपाली गोरखाली सैनिकों के सन् १८१६ में गोर्खाओं का प्रथम बटालियन जे फोरथ बटालियन नाम से स्थापित किया जाता है। यही से गोरखा सैनिक अंग्रेजी फौज की सबसे विश्वासी टुकड़ी बनी। यहाँ गौरखा सैनिको के सहायता से अंग्रेजो ने निकटवर्तो देशो और पूर्वोत्तर के राज्यो में विजय प्राप्त की।

मेघालय में गोरखाली नेपाली का आगमन तब हुआ जब नेपाल अभिभाजित असम राज्य की राजधानी थी। सन् १८६७ में अंग्रेजों ने शिलांग को पूर्वोत्तर राज्यों का जिला प्रशासन का मुख्यालय बनाय था। अतः मेघालय में नेपाली साहित्य के विकास यात्रा को अध्ययन करने के लिए दो वर्गो में विभाजित करके देखना चाहिए। मेघालय राज्य पूर्व और मेघालय राज्य पश्चात। मेघालय में नेपाली साहित्य के विकास क्रम में मुख्यतः कविता में महत्वपूर्ण योगदान हुआ है। नेपाली कविता के क्षेत्र में अध्ययन से ज्ञात होता है कि मेघालय में नेपाली कविताओं विविध विषयों को समेटे हुए है।

युद्धपरक काव्य

गोरखा सैनिक तुलाचन आले लिखित 'मणिपुर लडाई को सवाई' पूर्वोत्तर भारत की सर्वप्रथम नेपली कविता है। इसका रचनाकाल १८९३ है। अंग्रेजो के आदेशनुसार गोर्खा सैनिको द्वारा मणिपुर के राजा को गिरफ्तार कर लाने की कथा गोर्खा सैनको द्वारा दिखाई गई वीरता एवम् साहस का वर्णन है।

सुन-सुन पॉच हो। म केही भन्छु
मणिपुर को धावक सवाई सुनाउॅछु
बयापीस चवालीस सोहबलाई साथमालिया
कप्तान बाले साहेबलाई साथमलिया
नाम मेरो लेन्सानायक तुलाचन आले
जानि ने जानी अलिकति कथा जोरी हालें

दूसरी युद्धपरक काव्य, धनवीर भण्डारी की 'अब्बर पहाड़ को सवाई' है इसका रचनाकाल सन् १८९४ की है। नागालैंड पर स्थित अब्बर पहाड़ की किलो पर विजय की कथा है। गौर्खा सैनिको का संघर्ष पीड़ा और साहस का वर्णन है।

'जनवरी पन्ध्रमहाॅ धावा गर्न गया।
किल्ला किल्ला आड बाॅधी अब्बर जम्मा भया।।
रात रात पन्यो खोलो तरी रस्ता।
नाउबत उतान्या रसदका बस्ता।।

प्राकृतिक आपदाएँ संबंधित काव्य

सन् १८९८ में धनवीर भंडारी ने 'भूइचाॅलोको सवाई' नामक रचना द्वारा शिलांगमें आये विनाशकारी भूकंप का सजीव वर्णन किया है। कहा जाता है सन् १९९८ में भयानक भूकंप आया था जिसने शिलांग शहर को हिला कर रख दिया था।

सन्सरबार, ग्रीषम ऋृतु, मैना जेठ मास।
भूमी चल्दा शिलाङ शर भयो नास।।
जेठ जाॅदो असार लाग्दो मसान्तका दिन।
हल्लियो पृथिवी पनि येकैछिन।।

धार्मिक काव्य

'पदम प्रसाद दुंगना (१९३७- १९४१) की रचना रामायण शिक्षा 'पदम प्रकाश सप्तकाण्डम' में धार्मिक भावना से ओत प्रोत काव्य रचना है।

'अर्थात् कुरै नबुझि खालि पढेर मात्र।
हुदैन शिक्षित पढोस् जाति ने सुशास्त्र।।
तस्मात सबै सरल- बुद्धि- सुभक्तलाई।
शिक्षा मलेख्छु पढ चित बहुत लगाई।।

शिलांग के प्राकृतिक सौन्दर्य काव्य

शिलांग के प्राकृतिक तथा नैर्सनिक सौनदर्य का वर्णन करते हुए मणिसिंह थापा ने 'शिलांग ' नामक कविता लिखी है यह उनके काव्य संग्रह – 'कविताकुन्ज' सन् १९९१ में प्रकाशित है।

'स्वर्ग को जस्तो भरिलो जङगल खसिया पहाड़ को
यिनकै अच्चलमा भई शिलांङग हुर्के को
वर्षदा यहाॅ पानी र झरी शिलांङ झलिकन्छ
खोला र नाला सर्केरहेर टलक्क टल्किन्छ
विभिन्न जाति शिलांङबासी मिलेर बस्दछन्
विभिनै भाषा आपसमा बोली विचार बाॅइदछन्।'

विद्रोह और आक्रोश का स्वर

सन् १९७२ में धर्मलाल भूषाल की 'युग को घेरामित्र मलिन अनुहारहरू' प्रकाशित हुई जिसमें विद्रोह और आक्रोश का स्वर है।

'युगले मान्छेलाई बम बनाइदिएको छ
र मान्छेलाई सन्त्रास छ।
आपनो अस्तित्व मेटेन्छ कि भन्ने
मानव संस्कृत टुकिन्छ कि भन्ने'
गोपीनारायण प्रधान के काव्य में भी इसी बात की अभिव्यक्त हुई है।
'राष्ट्र राष्ट्रको तानातानमा
निर्दोष नागरिकहरूलाई मार्ने
बम फ्याकेर धरती खरानी गराउने
कुनै दाल, जाति र व्यक्तिको
स्वार्थसिद्धिको निम्ति
राष्ट्र राष्ट्रहरूलाई जुधाउने'
राष्ट्रीयता का स्वर
मणिसिंह थापा के काव्य में राष्ट्रीयता का स्वर मुखरित हुआ है।
'प्राणभन्दा प्यारो
आमाबाबु भन्दा प्यारो
छोराछोरी स्त्रीभन्दा
यो जन्मभूमि माता जननी भारत हाम्रो।'
बलराम पोखरेल की कविता में मातृभूमि प्रेम को दर्शाया है।
'चाहेका छैनॉ हे सरकार, यो राज्य खोस्नलाईः
खोजेका छैनॉ देशको सीमा टुकुरो पार्नलाई
मिलेर बसौं बॉडेरे खाऊ, सयचोटिभन्दैछो
ये मातृभूमिकै निम्ति हामी हजारौं मदैछों'

मेघालय के पारंपरिक खेल संबंधी काव्य

मेघालय में तीरंदाजी एक पारंपरिक खेल है 'तीर' व्यवसाय के साथ भी जुड़ा है तीर जुवा के रूप मे खेला जाता है। इस खेल के जरिये कई लोग करोड़पति हो गये कई कंगाल। बलराम पौखेल की 'तीर एक जुवा' नामक कविता में इस बात की अभिव्यक्ति हुई है।

'दुर्योधन को प्राङ्गन जस्तै बनियो तीरको खेला।
धनी गरीब सब होमिएका छदैं धनको धुवॉ।।
पच्चीस पैसा तिरे मताबिक अइक भनेको लागे।।
बीस रूपियाँ भेट्ने गर्छन् सज्जनहरू झन् जागे।।'

मेघालय नेपाली काव्य में व्यंग्य प्रधान काव्य भी देखने को मिलता है। बलराम पोखले की कविता 'यस्तो कसले मलाई बनायो' में व्यंग की भरमार है।

'अब मलाई' गम को थुप्रामा 'जम' गर्न
रम् भरी गिलासमा दम लगाउन
रिस गर्नेलाई 'फिस' दिन
धन पाइने परे 'रन' गर्न'

स्त्री विषयक काव्य

स्त्री के अधिकारों एवम् स्त्री की पीड़ा एवम् दर्द को अपने काव्य का विषय बनाकर लिखने वाली नारी लेखिका अनामिका राई ने स्त्री के दुःख को अपनी कविता में कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है।

'युर्गो पर्दा र बुर्कामित्र निस्सासिएर
चार देवलभिन्न थुना परेकी नारी,
छोरो नपाउँदा किचिएर, थिचिएर
मर्न बाध्य भएकी बुहारी
आपनो माइतीको घुरीसम्म हेर्न नपाई
अर्थी चढ्न बाध्य भएकी अभागी छोरी,
कतिसम्म यस्तै बाँछ्ने??'

मेघालय में नेपाली काव्य के विकास यात्रा के अध्ययन के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि पूर्वोत्तर भारत में नेपाली साहित्य के विकास का बीजारोपण मेघालय की राजधानी शिलांग में हुआ था। मेघालय में नेपाली काव्य के विकास दो चरणों में हुआ है प्रथम चरण सन् १८९४-१९७० (मेघालय राज्य बनने के पूर्व) और द्वितीय चरण १९७२-२००६ (मेघालय राज्य बनने के पश्चात)

मेघालय में नेपाली काव्य के विकास का प्रथम चरण आरंभिक दौर है जहॉ फुटकर विषयो को लेकर कविताऍ लिखी गई है वही दूसरी चरण मेघालय में नेपाली काव्य के विकास का चरमोत्कर्ष है जहॉ कवियों ने समसामयिक विषयो के साथ-साथ राष्ट्रीयत,अस्तित्व का प्रश्न, शिलांग के सौन्दर्य को समेटे हुए।

पूर्वोत्तर भारत में नेपाली लोक संस्कृति एवं गीत का विकासः

रीना रेग्मी

परिचय देना है

आदिकाल से लेकर आज तक मनुष्यों के रहन-सहन में अंतर आते गए "वन्य जीवन" बिताने वाले मनुष्य धीरे-धीरे गांव एवं समाज की स्थापना कर घर गृहस्थी का निर्माण किया। मनुष्यों में सामाजिक चेतना बढ़ती गयी साथ ही अपने अपने समाज के विधि-विधानों की रचना करने में संलग्न होने लगे। इसी प्रकार सभ्यता के इतिहास का प्रारंभ हुआ- फिर संस्कृति का भी विकास होता गया।

सभ्यता एवं संस्कृतिः सभ्यता एवं संस्कृति आपस में उसी प्रकार जुड़े हुए हैः जैसे एक सिक्के के दो पहलू हैं यही वैसे ही जहाँ सभ्यता है वहां संस्कृति है तथा संस्कृति है तथा जहाँ संस्कृति है वहाँ सभ्यता है। परन्तु इसके बावजूद दोनों में सूक्ष्म अंतर अवश्य दिखाई देता है। "आदिम मानव धीरे-धीरे न्यायावर जीवन के बदले स्थायी वास अथवा घर के निर्माण में, नंग्नता की जगह वस्त्रों को चुना, कच्चे मांस के बजाय पकाकर खाना, जंगल के बीच पगडंडियों का निर्माण करना, पत्थर के हथियारों के बदले धातुओं का व्यवहार में लाना आदि को सभ्यता कहा गया है तो घर की आकृति-प्रकृति, कपड़ों का आकार-प्रकार,खाद्य की विभिन्नता एवं व्यवस्था, हथियार के बनावट आदि में दिखाई देने वाले ढ़ाँचे, सृचन कला- कौशल आदि के छाप की संस्कृति कह सकते हैं। " संस्कार की गई बुद्धि-विकास की परम्परा को ही संस्कृति माना गया है।

भाषा साहित्य ही संस्कृति की धरोहर है – धारक – वाहक एवं संरक्षक है। साहित्यकार किसी भी समाज का प्रतिनिधि क्यों ने हो वहां का सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन भी साहित्य में अवश्य प्रतिलिपि होता है। संस्कृति को लोक-भाषा है, चित्त के आहलाद के लिए,मन के अनुरंजन के लिए सांस्कृति परक साहित्य की रचना उस समय भी होती थी और आज भी होती है परन्तु दोनों युगों में बहुत अंतर है। भाषा कितनी प्राचीन है लोक साहित्य की परम्परा भी उतनी ही प्राचीन है। नेपाली लोक साहित्य की शुरूआत को समझने के लिए भारतीय भारोपीय भाषा परिवार की अन्यतम शाखा संस्कृत तक

जाना होगा- जिसे आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का मूल भाषा मात्र न मानकर- भारोपीय भाषा परिवार एवं भाषा विज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन का आधार भी माना गया है। इस प्रकार आधुनिक सभ्यता से दूर अपनी सहजता प्राकृतिक अवस्था में वर्तमान तथाकित असभ्य एवं अशिक्षित जनता को लोक कहते है जिनका जीवन-दर्शन और रहन-सहन प्राचीन परम्पराओं, विश्वासों तथा आस्थाओं द्वारा परिचालित एवं नियंत्रित होता है। लोक साहित्य जनता का वह साहित्य है जो जनता द्वारा जनता के लिए लिखा गया हो। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदीजी ने 'लोक' संबंध में विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि 'लोक' शब्द का अर्थ 'जनपद' या ग्राम्य नहीं है बल्कि नगरों और गांवो में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधारपोथियाँ नहीं हैं। ये लोग नगर के परिष्कृत रूचि संपन्न तथा सुसंस्कृत माने जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलसिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं।

नेपाली लोक साहित्यः श्रुति परम्परा द्वारा जीवित नेपाली साहित्य का प्रयोग विश्व के प्रथम ग्रंथ त्रहगवेद में हुआ। त्रहगवेद में पद्य अथवा गीत को 'गाथा' शब्द से अभिहित किया गया है। प्राचीन काल में राजा के सुकर्मों को ध्यान में रखकर जनता द्वारा गाये गए गीतों को गाथा कहकर संबोधित किया गया। शतपय ब्राह्मण, ऐतेरय ब्राह्मण, महाभारत, जातक कथा आदि में भी वर्णित उदात्त भाव गाथा के रूप में ही प्राप्य है। लोक कथा की परम्परा भी उतनी ही प्राचीन है। नेपाली लोक साहित्य का विकास वि.सं. १३०० से माना गया है इसी वर्ष 'जितारी मल्ल' द्वारा रचित 'जितारी मल्ल' जिसमें जालंधर मल्ल की गाथा सामने की 'चांचरी' आदि रचनाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

नेपली लोक साहित्य जगत में दार्जीलिंग के हाजिरमान राई के आगमन से नया बीजरोपण हुआ। इन्होंने नेपली जाति के दुःख-दर्द, वेदना, तिरस्कार और विवशता के मर्म को बड़ी नजदीकी से समझा। अतः अपनी संवेदना के मर्म को कविता का रूप देकर 'मीठा-मीठा नेपाली गीत' नामक सग्रह प्रकाशित किया। इस अमूल्य भेट को पूर्वोत्तर के नेपाली लोगों ने हार्दिक पूर्वक स्वीकारा। इस कृति ने लोग-गीत के प्रचार के साथ-साथ लोक साहित्य की आवश्यकता एवं महत्व पर भी प्रकाशा डाला। इसके पश्चात दानवीर भंडारी कृत 'अब्बर पहाड़ को सवाई', तथा तुलाचन आले कृत 'मणिपुर को सवाई' प्रकाशित हुई जिससे नेपाली लोक गीत में नया आयाम स्थापित हुआ। पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन ने भी लोक- साहित्य अथवा लोक-गीतों के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'गोरखा पत्र' में गंगा प्रसाद प्रधान द्वारा रचित 'नेपाली उखान को पुस्तक' का प्रकाशन हुआ। प्रजातंत्र के प्रति जागरण सभ्यता- संस्कृति एवं साहित्य के प्रति रूचि ने भी लोक साहित्य को बढ़ावा दिया।

मित्रसेन थापा, बहादुर सिंह ब्राल, धर्मराज थापा, पारसमणि प्रधान, कृष्ण प्रसाद

पराजुली, धनवीर भंडार, तुलाचन आले आदि ने लोबा साहित्यगा कहें लोक गीतों को समृद्ध बनाया।

पूर्वोत्तर भारत में नेपाली लोक गीत

'समय के साथ-साथ ही मीन ने जीवन सग्राम का इतिहास भी अपना केंचूल बलता गया। लोक साहित्य में लोक गीत का महत्वपूर्ण स्थान है। मानव जीवन में अवस्थित प्रेम, करूणा, आशा, निराशा, हर्ष-विषाद आदि की अभिव्यक्ति लोक गीतो में होती है।' लोक गीतों की सर्जना में प्रकृति की बहुत बड़ी भूमिका रही है। "प्रकृति की अनूठी रूप लावण्य में आत्म विभोर होकर अथवा उसकी काल- विकराल रूप का भीषण वज्रपात की ध्वंसलीला में लाचार होकर शारीरिक मानसिक श्रम-तनाव आदि जीवन के घात – प्रतिघातों से छुटकारा पाने को आतुर मनुष्य ने शब्द में 'स्वर' तथा भाषा में 'लय' डाला। " यह लयात्मक अभिव्यक्ति हो, लय तथा राम ही इसके ऐसे तत्व हैं जो अन्य विधाओं से इसके पृथक करते है। इसकी अभिव्यक्ति शिशु को पालने में सुलाते समय, बालक- बालिकाओं के बाल सुलभ क्रीड़ाओं में, खेत- खलिहानों में काम करते समय एवं विभिन्न संस्कार एवं त्योहारों में होती हैं। शोक एवं विरहावस्धा में भी दर्द बनकर मन के भाव गीत के रूप मं प्रकट होते हैं। चाहे नर हो या नारी, वृद्ध हो या बालक सभी के बीच लोकगीत अतिलोक प्रिय है। नेपाली लोक गीत की संरचना में कथा, भाषा चरण, पद, अंतरा, रहनी, लय, भाका, नृत्य एवं वाद्ययंत्र आदि नौ तत्व प्रमुख हैं। लोक गीत गाते समय स्थायी को बार-बार दोहराया जाता है जिसे 'टिपुवा' अथवा 'छोपुवा' भी कहते हैं। बार-बार दोहराये जाने वाले शब्दों को 'रहनी' कहते हैं।

जैसे - ए साँइली माइको बाछी लरीबरी घुम्छ तगारैमा।
ए साँइली बाँचुजेल हाँस- खेल गरौ मैट बगरैमा।।

लय अथवा 'भाका लोक गीत का स्तर गठन है। लोक जीवन में गाये जाले वाली खास शैली भाका है। मुरली, बाँसुरी, शहनाई, सारंगी, टुडना, एकतारा, मादल, खैजड़ी, ढयाङ ग्रो, डम्फू, डमरू आदि वाद्य यंत्रो का प्रयोग लोक गीत गाते समय किया जाता हैं।

नेपाली लोक गीत साहित्य की अन्य विधाओं में सबसे अन्यतम विद्या है। सहभागिता, प्रकार्य, तथा लय के आधारपर नेपाली लोकगीत को सामान्य गीत, संस्कार गीत, विशेष धार्मिक गीत, पर्वगीत, श्रमगीत आदि विभिन्न भागों में विभाजित किया गया है।

सामान्य गीतः इसके अंतर्गत बारहमासे, कौरा इयाउरे, संगिनी, राइला, रोदीघर, दोहोरी, जुवारी, टुडना, रोलो आदि गीतों को समाविष्ट किया गया है। सभी गीतों में से इन्याउरे एवं दोहरी गीत संपूर्ण नेपाली जाति में अति लोकप्रिय गीत है। इन्याउरे बारह महिने गया जाने वाला मनोरंजनात्मक गीत है। साथ ही नेपाली लोकगीतों का उत्थान इन्याउरे छन्द से हुआ यह कहना अतियुक्ति न होगी। इस गीत को मादल बजाकर प्रस्तुत

किया जाता है साथ ही उसकी ताल पर नृत्य भी किया जाता है। संवाद के रूप में गाये जाने वाले गीत को दोहोरी गीत कहते हैं। प्रश्न एवं उत्तर वाले इस गीत में खेल, प्रेम तथा हंसी मजाक के साथ जातीय एकता की भी भावना व्यक्त होती है।

जैसेः

युवकः आलु काटी तरकारी पाकरछर।

मोरो माया तिमीलाई लाग्छ र।।

युवतीः आलु काटी तरकारी पाकतैन।

तिम्रो माया मलाई न लाग्दैन।।

संस्कार गीतः जन्म से लेकर मृत्यु तक १६ संस्कार हैं भारतीय जन जीवन में संतान के गर्भ में आने के पूर्व ही से संस्कारों का सिलसिला आरम्भ हो जाता हैं। संतान के जन्म के बाद ही से गीत गाने शुरू हो जाते हैं। छह दिन में छैटी, ग्यारह दिन में नामकरण, चूड़ाकर्म (छेवार) लड़कियों के वय्स्क होने पर वस्त्र दान यानी गुन्यू-चोली, विवाह के समय मांगल, सगुन, रत्योंली एवं अशिका आदि गीत प्रसिद्ध हैं।

जैसेः सुन वयारै खड़क रैमा रूपेक्यारे कपटेरूले

भुट दिदै भुट बुने गनेसको पिठो।।

तॉवो धातु दियो बाल गंगाजी को कलस थाप .

सगुन हालीभुट दिदै कान्छा भाइको बिहे –

स्त्रियों के कर्ममय जीवन के घात – प्रतिघात, ताड़ना- यातना, हर्ष विषमय, आदि का स्वतंत्र अभिव्यक्ति का एक सुनहरा अवसर है 'रत्यौली'। दुल्हा के घर में विवाह की रात दीपक जलाकर दूल्हे की माँ सारी रात जगाकर उस दीपक की लौ को जलाए रखतीहै। इसी दौरान गाँव घर की स्त्रियों को आमंत्रित कर रत्योली गीत एवं नृत्य करने की परम्परा शुरू हुई।

जैसेः ए लाउरे! भात खान आउरे

साइनो छैन लोटाले बोलाडरे।।

उक्कालिमा जांदा- जाँदा दाइने परी बर

जान्न मत नलाउ कर के को खांचो छ र।।

विशेष धार्मिक गीतः इसेक अंतर्गत भजन, आरती धमारी, एवं भलाउलो गीत आते हैं। विभिन्न धर्मों एवं संप्रदायों में भिन्न-भिन्न देवताओं का आराधना तथा पूजा की जाती है। इनकी स्तुति में गीत गाये जाते है। भजन गाकर अपने इष्ट देव को प्रसन्न किया जाता है।

जैसेः 'राधा पिहारी खै लेउ मेरी मुरली'
तथा
जै देवी कालिका अम्बिका माता असुर मारिणी चंडिका
चंडिका कपसे असुर मारिणी कालिका रूप संघारिए।

आरती में आरध्य के गुण-कर्म स्वभाव की वंदना की जाती है। धमारी एवं भलाउलो गीतों में भी देवी देवताओं के स्वरूप की प्रशंसा की जाती है।

पर्व गीतः नेपाली समाज में बारह महिने में तेरह पर्व है यह कहना अतियुक्ति न होगी। इन बिभिन्न पर्वों एवं त्योहारों में गीत गाये जाते हैं, जिन्हें पूर्व गीत कहते हैं। इन गीतों में गौरा, दीच, कासिरी,देउसी, भैलो,फागु आदि प्रमुख हैं। बिना गीतों के पर्वो का कोई महत्व नहीं।

अतः नेपाली समाज में ये गीत अतित लोक प्रिय हैं।

जैसेः देउसी गीत- युवकों द्वारा गाये जाते हैं -।
एक– ए सिलिमिली झिलिमिली।
युगल- देउसिरे
एक ए के को झिलमिली
युगल – देउसिरे
एक – ए फूल को झिलमिली।
युगल – देउसिरे।

भैलो गीतः भैलेनी अर्थात युव तियाँ प्रत्येक घर के आंगन में गाते हुए जाते हैं और भैलो गीत गाती हैं।

भैलिनी आयौं आंगन
बढ़ारीकुढ़ारी राजन
ए औंसी बारो गाई तिहारो भैली।

तीज गीतः तजिका खाजा मीठा पोलेका तामलि
नरेउ भांजी लिन आम्ला भन्थे मामाले

शिरे लाउने शिरफूलमा लालु मोहर लेखको
हेर पापी निधारमा सौता लेखेको।

श्रीमगीतः नेपाली समाज परिश्रम से निर्मित समाज है।
रानीरिक श्रम द्वारा उनका पुरूषार्थ गतिशील है। अपने श्रम के दुःख को भुलाने के लिए ये गीत गुन- गुनाते हुए काम करते हैं। इसके अंतर्गत- असारे गीत,

दाई गीत, धाँरे गीत, निंदरी आदि गीत आते हैं।

जैसे- असारे महिना मा पानी परो रूझआउने,
एकलो यो मरी मन कसरी बुझाउन,
भन्छिन है मइचैंग ले रूदै धर र।

इस प्रकार किसी भी गीत- संगीत का प्रयोजन आनंद की अनुभूति कराना है . लोक गीत भी मनुषय को आनंद प्रदान करते हैं। इन गीतों की अभिव्यक्ति सरल, सरस एवं सरस एवं सहज भाषा में होती है। पूर्वोत्तर भारत के विशेषकर मेघालय राज्य की चर्चा करें तो यहां की लोक साहित्य का व्यापक प्रचार-प्रसार है। नेपाली लोग तीज एवं त्योहारों को पूर्ण विधि- विधान से लोक गीत गाते हुए, लोक नृत्य करते हुए मनाते हैं-।

जैसे-शिलांग में गोरेटो सामाजिक सांस्कृति संस्था, गोर्खा परिसंघ नेपाली महिलाओं द्वारा तीज का पर्व दुर्घा मंदिर, कृष्णा मंदिर, नड़धुमाई नेपाली हायर सेकेंडरी स्कूल, गोर्खा स्कूल आदि जगहों पर धुमधाम से मनाया जाता है। भानु जयन्ती, शहीद दिवस, भाषा मान्यता दिवस आदि कार्यक्रमों में लोक गीत एवं लोक नृत्य प्रस्तुत किए जाते हैं। इन सभी कर्यक्रमों में नेपाली भाषी के साथ-साथ अन्य भाषा भाषी के लोग भी सहभागिता लेते हैं। लोक नाटकों का भी मंचन समय-समय पर यहाँ होता आ रहा है। लोक गीत गायक, कथा लेखक, नाटककार, उपन्यासकार, कवि आदि भी इस भूमि में जन्म लेते रहे हैं। नेपाली लोक काव्य एवं कथाओं का प्रकाशन पत्र-पत्रिकाओं में होता आ रहा है।

अतः निषकर्ष रूप से यह कहा जा सकात है कि नेपाली लोक साहित्य एवं लोक गती अति समृद्ध साहित्य है। जिसमें मानव सभ्यता का प्राचीन इतिहास अंकित है। इसी लिए लोक गीत को जनता की अतुल्य संपत्ति माना गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. भारतीय सभ्यता आरू संस्कृतिः विश्वनारायण शास्त्री- पृ. ५
२. भारत वही – पृ. १०
३. नेपाली भाषा को उत्पत्ति डॉ. . चुड़ामणि उपाध्याय रेग्मी ! पृ. ६
४. नेपाली जन साहित्य; कानीमान कान्दग; रायल नाटक अकादेमी संवत २०२
५. नेपाली लोक साहित्य को रूपरेखा; खेमराज नेपाल, साहित्य अकादेमी सन् २००३
६. हाम्रो सांस्कृतिक इतिहास, काली भक्त पंत, संवत २०२५
७. लोक साहित्य के प्रतिमान; कुंदनलाल उप्रेति; भारत प्रकाशन मंदिर, अलिगढ़ सन् १९७१
८. नेपाली लोक साहित्य को रूप रेखा- खेमराज नेपाल,साहित्य अकादेमी सन् २००३

गारो भाषा–एक परिचय

शाईनी. के. संङ्मा

शोधार्थी, हिंदी विभाग, नेहू

भाषा उसे कहते हैं जो व्यक्त वाणी के रूप में अभिव्यक्ति की जाती है। गारो भाषा जनजातियों के बीच बोली जाने वाली भाषा है। वे अपने को A.Chik कहते हैं, जिसका अर्थ है पहाड़ी व्यक्ति। गारो भाषा को तिब्बती-चीनी परिवार के तिब्बती-बर्मन उपपरिवार के बोड़ो अपसमूह के अंतर्गत स्वीकार किया गया है। इस भाषा को केवल गारो हिल्स में ही नहीं बल्कि असम, बंगाल, त्रिपुरा, नागालैंड और बंगलादेश के कुछ क्षेत्रों में भी बोली जाती है। गारो भाषा के अंतर्गत कई बोलियाँ हैं, जिनमें A.we, Ruga, Chi-bok, Dual, A. beng (Am. Beng), Matchi, Matjangchi, Matabeng आदि प्रमुख है।

कहा जाता है कि गारो लोग तिब्बत से आये हैं। इसका कोई लिखित प्रमाण तो नहीं है, लेकिन उनके मौखिक साहित्य में इसका प्रमाण मिलता है। वे तिब्बत से आकर बंगाल और असम के मैदानी इलाकों में ४०० वर्षों तक निवास किए। वहाँ रहते हुए उन्हें असुरक्षित हुआ और स्थायी निवास स्थल की खोज में वर्तमान में गारो हिल्स तक आ पहुँचे।

गारो भाषा को लिखित रूप देने का प्रथम प्रयास अमेरिका के बेप्टिस्ट मिशनरियों ने किया। उन्होंने पहले बंगला लिपि का प्रयोग किया, बाद में रोमन लिपि का गारो भाषा के शब्द निर्माण में बंगला एवं अंग्रेजी भाषा का अधिक प्रभाव मिलता है। जबकि गारो भाषा भी अपने में बहुत समृद्ध है। इस भाषा की समृद्धि उसकी लोक कथा, लोक गीत, लोकोक्ति- मुहावरों, धार्मिक संस्कार एवं मंत्रों में देखी जा सकती है। इन सभी समाग्रियों का संकलन कार्य किया जा रहा है जो लुप्त होन की स्थिति में थी।

गारो भाषा के लिए रोमन लिपि का प्रयोग किया जाता है। केवल गारो शब्दो को ही लिखा जाए तो रोमन लिपि के बीस ही वर्ण काफी होते है लेकिन गारो में कई अंग्रेजी शब्द होने के कारण बाईस वर्णों की आवश्यकता होती है। वे बाईस वर्ण इस प्रकार हैं – a, b, c, d, e, f, g, h, I, k, l, m, n. o, p, r, s, t, u, v, w.

गारो के अपने शब्दों के लिए 'f'और 'v' वर्णों की आवश्यकता नहीं होती,लेकिन अंग्रेजी से लिए गए शब्दों के लिए इसे स्वीकार किया गया है। ध्यान देने की बात यह भी है कि 'C' वर्ण का प्रयोग गारो में 'h' बिना नहीं किया जाता।

गारो की शब्द- सम्पदा को देखने के लिए हम कुछ उदाहरण को ले सकते हैं- जैसे Wa. a या बाँस। गारो में बाँस की जातियों के लिए अलग-अलग नाम रखे गए हैं। जैसे- Wa.ge, wa. nok, wa. kanta, wa. tre, wa. bok आदि।

इसी प्रकार बाँस से बनी चीजों के लिए wa. पूर्वसर्ग लगाकर कई नाम रखे गए है – wa. sing (आग को हवा देने हेतु), Wa.se फाड़ा हुआ बाँस, जिसका उपयोग घर बनाने के लिए किया जाता है।, Wa. srep बड़े बड़े हिस्सों में फाड़ा गया बाँस. जिसका उपयोग मशाल के रूप में किया जता है।, Wa.jol (लम्बा बाँस, जिसका उपयोग फल इत्यादि तोड़ने के लिए किया जाता है।, इसी तरह बाँस के बनी वस्तुओ के कई उदाहरण हम ले सकते हैं।

गारो में फल के लिए Bite शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसी तरह लग-भग सभी फलों के नाम te पूर्वसर्ग लगाकर ही रखा गया है। जैसे – Te. Gatehu (आम), Te. Brong (कटहल), Te. Rik (केले) आदि।

गारो भाषा में Raka का महत्वपूर्ण स्थान है। शब्द में वर्णों के बीच लगाई जाने वाली बिंदी को Raka कहते हैं। इसके अभाव में अर्थ का अनर्थ हो जाता है। उदाहरण के लिए Tua का अर्थ है सोना या सो जाना, और इसी शब्द में Raka लगा दिया जाए तो Tu.a जिसका अर्थ है। गहरा। एक वाक्य का उदाहरण इस प्रकार है-

Ia bi.sa seng. a. इसका अर्थ है यह बच्चा चतुर है। Ia bi.sa senga. इसका अर्थ हुआ यह बच्चा बद्बूदार है। इससे स्पष्ट होता है कि एक बिंदी के अभाव में अर्थ कैसे बदल जाता है। इसे हम ग्लॉटल साउण्ड कहते हैं।

गारो शब्दों का संकलन एवं गारो व्याकरण लिखने वाले कई विद्वान हुए। कुछ किताबों के नाम इस प्रकार है-

१. गारो वोकाबुलारी (१७८८-८९) – जॉन इलियट
२. गारो वोकाबुलारी (१८००) – फ्रान्सिस हेमिल्टन
३. गारो वोकाबुलारी (१८३७) – रेवरेंड नाथान ब्राउन
४. गारो वोकाबुलारी (१८४९) – विलियम रॉबिन्सन
५. गारो वोकाबुलारी (१८४९) – बी. एच. हॉगसन
६. गारो वोकाबुलारी (१८६७) – रामनाथ चक्रबर्ती
७. गारो वोकाबुलारी (१८६८) – डबल्यू. डबल्यू. हण्टर
८. फ्रेसेस इन इंलिश एण्ड गारो (१८६८)- रेवरेंड माइल्स ब्रोन्सन
९. ए वोकाबुलारीऑफ द गारो एण्ड कोच डाइलेक्तस- डबल्यू. एच. विलियमसन
१०. ए वोकाबुलारी बेस्ट ऑन रोबिन्सन्स् एण्ड विलियमसन कलेक्सन्स ऑफ

गारो वोकाबुलारी (१८७२)- ई.टी. डेल्टन

११. डिक्सनरी ऑफ गारो लेंगएज (१८७३) – टी. जे. कीथ
१२. गारो वोकाबुलारी (१८७४)- सर जॉर्ज केम्बेल
१३. गारो वोकाबुलारी (१८८४)- रेवरेंड एस. एण्डले
१४. बंगाली- गारो डिक्सनरी(१८८७) – रेवरेंड रामके डबल्यू. मोमिन
१५. ऑन द गारो लेंगुएज (१८८५) – जॉन एवरी
१६. गारो वोकाबुलारी (१८९१) –ए डबल्यू डेविस

गारो शब्दों का संकलन कार्य १७८८-८९ से ही हो चुका था. लेकिन गारो व्याकरण लिखने का कार्य १८४९ से

प्रारंभ होता है। असम के सरकारी स्कूलों के इंस्पेकटर विलियम रॉबिन्सन ने १८४९ ई. में पहला गारो व्याकरण लिखा। उनके बाद ई.जी. फिलिप्स ने. 'A.Chik Grammar' नामक गारो व्याकरण लिखा। रॉबिन्स बर्लिंग द्वारा लिखित 'A Garo Grammar' (१९६१) भी उल्लेखनीय है।

गारो भाषा को MIL आधूनिक भारतीय भाषा विषय के रूप में मैट्रिक के स्तर तक कलक्ता विश्वविद्यालय द्वारा १९२५ ई. में स्वीकारा गया। १९६१ ई. में हायर सेकण्डरी व प्री.यूनिवर्सिटी में मान्यता मिली, १९७१ में अण्डर ग्रेजुएट लेवल तक MIL के रूप में और १९६८ से ऑनर्स विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा। १९९६ में पूर्वोत्तर पर्तीय विश्वविद्यालय में गारो विभाग खुलने से इसकी स्नातकोत्तर की पढ़ाई भी शुरू होती है। गारो विषय में पीएच. डी कराने की शुरूआत २००१ सो होती है।

अन्य भाषाओं की तुलना में गारों भाषा उतनी समृद्ध नहीं है जितनी होनी चाहिए। गारो की कई बोलियाँ लुप्त होने की स्थिति में है। अनुवाद के कार्यों में भी हमें अन्य भाषाओं से उधार लेना पड़ता है। शायद यही कारण है कि आज के गारो बच्चे अपनी ही भाषा के शब्दों को समझ नहीं पाते हैं। आशा करती हूँ कि यह भाषा हिंदी एवं अन्य भाषाओं के साथ मिलकर अपनी पहचान एवं समृद्धि बनाए रखेगी।

सहायक ग्रंथ

१. A.chik Grammar – E.G. Phillips, Tura Book Room
२. Ku. Sikmi Bidingo Seanerang – Brucellish k. Sangma
३. Duramong – The Status of A.chik Language – Dokatchi ch. Marak

आधुनिक उपन्यास साहित्य में स्त्री-सशक्तीकरण आयाम

डॉ. रशमी सी. मलागई,

शिवागिरी, धारवाड- ५८०००७ (कर्नाटाका)

साहित्य का विषय स्त्री जीवन कैसे बना यह भी वैचारिक मंथन का विषय है। प्रायः साहित्य के लिए उपेक्षित, प्रताडित विषय अभिप्रेत होता है। शक्तिरूपा स्त्री समाज में युग-युग से प्रताडित, अन्यायग्रस्त पीडित रही। अपनी दुरावस्था, अन्याय को वह कर्मफल अथवा दुर्भाग्य मानती रही। पाश्चात्यों के संपर्क से ज्ञान चक्षु प्राप्त होते ही पुरूषों का ध्यान भी संसार रथ के इस दूसरे पहिये की ओर आकृष्ट हुआ। स्वयं स्त्री भी इस अजान की मोहनिद्रा से जागृत होने लगी। उसकी मूक वेदना को साहित्य ने वाणी प्रदानकी। साहित्य की हर एक विधा में स्त्री जीवन के विविध रूपों का उसकी विविध उसकी वेदना, उसकी प्रगति-अवनती, दुख, उसकी कुंठा, आदि का मनोज्ञ रूप चित्रित होने लगा। हिन्दी उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री-जीवन साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में नारी व पुरूष दोनों का अस्तित्व समाज के रूप में महत्वपूर्ण है। उपन्यास कथात्मक विद्या है और कथासूत्रों की रचना में स्त्री चरित्रों का चित्ररण होता है। सृष्टि की आदिशक्ति स्त्री कई सदियों में उपेक्षित और हीन बनी रही. उसकी यह उपेक्षा, शोषणा, दयनीयता भी उपन्यासों का विषय रहा है। उपन्यास में घटनाएँ और पात्रों में यथार्थता होती है। अगर उपन्यास में यथार्थत को उद्घाटित किया गया होता तो वह उपन्यास समाज की दृष्टि से सफल उपन्यास कहलाता है। वर्तमान काल में नगरीकरण के प्रभाग से संयुक्त परिवारों का विघटन हुआ, दांपत्य जीवन में तनाव आया। पति-पत्नी के बीच में असहमित व अविश्वास आया,स्त्री-शिक्षा पर बल दिया गया, स्त्रियाँ कमाने लगी, बाल अपराध फैलने लगे, समाज में नशाखोरी, वेश्यावृत्ति, बेकारी,जातिवाद उग्ररूप धारण करके फैलने लगा और इसी बीच स्त्री अपना अस्तित्व खोजने लगी। स्त्री को अपने अस्तित्व की पहचान इसी काल में हुई। इस काल की परिस्थिति का प्रभाव स्त्री के जीवन पर हुआ।

१. परिवार और स्त्री सशक्तीकरण-

समाज की वह प्राथमिक इकाई जिसमें कुछ व्यक्ति परस्पर मिल जुलकर रह सकते है, परिवार कहलाती है। परिवार

का स्वरूप छोटा भी हो सकता है और बडा भी। यह एकल भी हो सकता है या संयुक्त भी. परिवार के विस्तृत रूप में दादी-दादा चाची- चाचा, बहन, भाई आदि को भी सम्मिलित किया जा सकता है, जबकि छोटे परिवारों में माता-पिता के साथ उनके बच्चे ही रहते है।

२. घरेलू हिंसा के संदर्भ में –

पिछले कुछ वर्षों में स्त्रियों के विरूद्ध हिंसा में तीव्र वृद्धि हो रही है। घरेलू हिंसा से बचाने के लिए स्त्रियों को

अंतरात्मा व आत्मनिर्भरता को शक्तिशाली बनाकर काफी मजमबूती से कदम उठाना पडेगा, व शिक्षा के प्रभाव और प्रयास को अपनाना पडेगा।

गीतांजलीश्री का 'माई' एक लघु उपन्यास है। पारस्परिक व्यवहार में सामीप्य एवं दूरी तथा स्वतंत्रता परंतत्रता आत्मनिर्भरता तथा पारस्परिक निर्भरता की द्वन्द्वात्मक तर्क पद्धति तथा प्रबंधन की समस्या की ओर लेखिका हमारा ध्यान आकृष्ट करना चाहती है। अपनी- अपनी सामर्थ्य के अनुसार देने का अधिकार तो और भी कम है। किसी का भागय ही पाने का संयोग उत्पन्न कर सकता है। इसी तरह संबधों के मामले में समीप्य तथा दूरी के संतुलित प्रबंधन से ही पारस्परिक सुख व सुविधा की स्थिति पैदा हो सकती है। सुधा आरोडाजी द्वारा लिखित 'यहीं कहीं था घर' में उपन्यास की नायिका चित्रा अपने बेटे के मानसिक रूप से संतुलित नहीं देख रही थी। पर पति की इस हिंसात्मक वृत्ति को वह सहन नहीं कर पाती। अपने बेटे की खुशी के लिए वह पति को छोडने के लिए तैयार होती है।

ज्ञानप्रकाश विवेकजी का 'अस्तित्व' उपन्यास यह अत्यंत मर्मस्पर्शी रहा है। नायिका- एक निम्न- मध्यवर्गीय परिवार की सरयू मात्र तीन सप्ताह के अंदर अतुल की पत्नी बनती है, अतुल के घर आते ही सरयू सर्व सुविधाओं से संपन्न भव्य कमरे में कैद कर दी जाती है। उस घर में नौकर है, लेकिन वे भी आवश्यकतानुसार ही प्रकट होते है। लच्छेदार भाषा में बात करने वाला पति व अतुल का व्यवहार पहले से ही क्रूर भाव का था। पति के सुख से वंचित सरयू की फैक्टरी का डायरेक्टर बना देते हैं। अपने वाक्जाल में सरयू को फँसाकर ऐंठना चाहते थे। हालाँकि इस दौर में स्त्री की संवेदना का उल्लेख किसी एक खास बिंदु या दायरे पर ठहरी हुई नहीं है। ऐसे में स्त्रियों में एक चुप्पा विद्रोह जन्म लेता है, जो बाद में मुखर होने लगता है। परिवार की मर्यादा के नाम पर उसे दबाने की कोशिश कामयाब नहीं होती, बल्कि रास्ता चुनकर वह स्वयं सबल बनाना चाहती है।

३. आर्थिक शोषण के संदर्भ में –

आर्थिक नियोजन महिला विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके अलावा देश में सामान्य वार्षिक नियोजन में भी परिवार विशेष की भागीदारी होनी चाहिए। विषणु प्रभाकरजी का 'अर्धनारीश्वर' उपन्यास आर्थिक व पारिवारिक दायित्यव के बोझ में दबी – घुट- घुटकर मरनेवाली एक अन्य नारी है- शहीदा अंजुम। वह मुस्लिम परिवार की नारी है। माँ और बहनों के भरण-पोषण का बोझ उस पर है। अतः वह अपने प्रेमी अनुसूचित जाति के युवक शिवनाथ से विवाह नहीं कर पाती। उसके सामने एक ओर विधर्मी प्रेम की समस्या है तो दूसरी ओर परिवार की आर्थिक समस्या। अपनी इच्छाओं के प्रति अंकुश लगाती है।

सूर्यबालाजी का 'यामिनी कथा' एक स्त्री की संवेदनात्मक जटिलता, उसके मानसिक तनावों और उसके आत्मसंघर्ष की मर्मस्पर्शी कथा है। भामिनी पति विश्वास की मृत्यु के बाद सब तरह से निर्धन होकर अपने बच्चे पुतूल के लिए समर्पित है।

४. यौन उत्पीडन के संदर्भ में –

यौन उत्पीडन एक ऐसा अपराध है, जो प्राचीन काल से ही परिवार में व्याप्त है। तथ्य बातें हैं कि भारत में आजादी के बाद यौन उत्पीडन की घटनाएँ तेजी से बढी हैं। परिवार में स्त्रियों को अकसर पति, ससुर, सास,ननद व देवर आदि के हाथों भी उत्पीडन का शिकार होना पडता है। कमल कुमार जी का उपन्यास 'हैमबरगर' एक नवीनतम उपन्यास है। नायिक रत्तीन्द्र इस बात को लेकर बेहद चिंतित है। जब हॉस्टल से घर आती है, दीदी उसे कई बार पूछती है कि 'क्या बात है' रत्तीन्द्र पर अत्याचार उनका भावी पति कुलवीन्द्र ही करता है। रत्तीन्द्र पुत्तर तबीयत को क्या हो गया? चल डाक्टर के पास चल। डाक्टर का नाम सुनते ही वह पसीने से तर-बतर हो जाती है। सिर से पैर तक काँप जाती। पर रत्ती की मौसी जब विदेश से लौटती है, तब रत्ती की स्थिति तथा ऐसे समय में स्त्री की नयी मानसिकता अपरिचित रह जाती है। मौसी स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व के प्रति जागरूकता की अभिवयक्ति है। कठगुलाब की नायिका स्मिता प्रकृति से रमरस पानेवाला एक पात्र है। माँ के मरने के बाद पिताजी स्मिता व नमिता को लेकर दिल्ली चले गये थे। नमिता कहती है, अच्छा हुआ कि गाँव छोडकर शहर आ गया। लेकिन स्मिता प्रकृति से प्रेम करती है गाँव से प्रेम है।

५. महत्वपूर्ण निर्णयों के संदर्भ में –

अक्सर सभी परिवारों में पति-पत्नी के बीच छोटी-छोटी बातों पर झगडे होते हैं। लेकिन महत्वपूर्ण निर्णयों में जीवन में सभी को भागीदारी बनाना आवश्यक माना है। विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित 'अर्द्धनारीश्वर' लगभग पाँच सौ पृष्ठों का महाकाव्य उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास का एक मुख्य पात्र 'अजीत'। विष्णुजी ने स्वयं व्यक्त किया है कि उप पात्र में मै अपने को आरोपित है।

मैत्रेयी पुष्पाजी का 'चाक' उपन्यास महत्वपूर्ण उपन्यास है। सारंग नैनी इस रचना की नायिक रही है, जो प्रारंभ से रंजित के प्रति आकर्षित है। वह अपने पति का निर्णय वह उचित मानती है। आधुनिक उच्च शिक्षा रंजित गाँव में ही रहकर नए तरीके से खेती करके गाँव को सुधारना चाहता था।

शशिभूषण सिंहलजी द्वारा लिखित साधना उपन्यास में साधना स्वभाव से सौम्य शिषट और संकोची है। अपने विवाह की बातों से वह प्रायः झेंप जाती है। ऐसे में झेंप मिटाने को उसका एक ही उत्तर होगा.... "साधना ने पहलू बदला। घर में किस का क्या होना है? की बेताबी क्यों? परिणाम तक पहुँचाने वाली वह कौन? साधना ने मन को लगाम दी। ध्यान से, बाहर भागने पेडो को देखने लगी।" मन ही मन साधाना भली भाँति जानती है कि जिस तरह स्त्रियाँ बिना शादी किए रहती है, उस तरह वह कभी नहीं रह सकती।

सुभाष पंतजी द्वारा लिखित 'पहाडचोर' इस उपन्यास में सुखिया गाँव पर आये संकट से निपटने के लिए जान की बाजी लगानी चाहती है। दूसरी तरफ एक आदर्श पत्नी तथा मातृत्व का प्रतिरूप बनकर स्त्री जाति को ही सतर्क करना चाहती है। पति रग्धू पर तो उसे पूरा विश्वास है। वह पग- पग पर उसका साथ देता है। कंपनी वालों को गाँव से भागने में सुखिया के साथ मन लगाकर काम करता है। अपनी पत्नी सुखिया की निष्ठा व उसकी लगन के सामने वह झुका है।

६. समाज सुधार आंदोलन के संदर्भ में –

दसवें दशक के मध्य से शुरू हुई बीसवीं शताब्दी के अंतिम चरण में लिखित उपन्यास भी चर्चा के योग्य है। इसके

बावजूद उन्यास की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि लेखक सोए हुए समाज को वैचारिक आधार पर संगठित करके उत्पीडन शोषण व जागित भेद-भाव से मुक्ति के लिए संघर्ष की प्रेरणा देता है। स्त्री सशक्तीकरण क्रांति एक सतत प्रक्रिया है, जो सामाजिक क्रांति को एक निश्चित लक्ष्य की ओर ले जाती है। तस्लीमा नसरीन के अनुसार 'महिलाओं के सामाजिक जीवन के प्रत्येक जागरण और क्रिया कलापों की सहायता करनी चाहिए, ताकि वे अपने कूपमंडूक आमकेंद्रित घरेलूँ व पारिवारिक मानसिकता से बाहर आ सकें।' स्त्री सशक्तीकरण अंतस की चेतना को भी बदलने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है। सशक्तिकरण की ओर संकल्पबद्ध होना आवश्यक है।

शिवप्रसाद सिंहजी के 'औरत' उपन्यास में गाँव के जीवंत मूल्यों के प्रतीक शिवेंद्र के इस कथन में समसामयिक ग्रामीण जीवन की विसंगतियों की कितनी मार्मिक है। ससुर इस गाँव में लगता है, "तोरे पडदादा की जमीनदारी फिर आ गई लौटकर। उसे उखाड कर गाँव छोडूँगा। देखूँगा तुझे देखूँगा तुझे याद रखना खोबरन, अब पाला देवेन्द्र से नाटीं शिवेंदर से पड़ा है। देवेंदर गुलाम हिंदुस्तान में जन्मे थे। शिवेंदर का जन्म आजाद हिंद में हुआ है। नयी चेतना व प्रगतिशील विचार सामूहिक रूप में फूट पडता है।

७. विविध संस्थाओं की स्थापना –

पिछले कुछ वर्षों महिलाओं की जीवन शैली में महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिलते है, जिनसे उनके व्यवहार, मूल्य, संवेदनाओं तथा प्रेरणा शक्ति ही प्रभावित है। सामाजिक परिवर्तन के घूमते चक्र के कारण ही महिलाओं को परम्परागत रूपढ़िवादि भूमिका से काफी हद तक मुक्ति मिल गई है, हालाँकि इस प्रक्रिया में विभिन्न कानूनी प्रवधानों ने भी सकारात्मक भूमिका है।

'दस द्वारे का पिंजरा' में स्त्री मुक्ती की आकांक्षा की विविध रूप से परखने की कोशिश करती है। शायद इसलिए वे दर्शन के माध्यम से भी इसे समझाने का प्रयास करती है। स्त्री मुक्ति के लिए रमाबाई का दिव्य जीवन व अनवरत उत्सर्ग विराट् मनुष्यता के लिए स्त्रियों की तडप एवं सामाजिक मुक्ति को आधुनिक मूल्यों की स्थापना का कारक बनाना मात्र इस उपन्यास का उपजीव्य नहीं है, बल्कि वह सुधार आन्दोलन की मशाल बनने में सक्ष्म हुई है अब उसे अपने इस चिंतन को कार्यान्वित करने का रास्ता नजर आ रहा था। स्त्री सशक्तीकरण के प्रति रमाबाई व फेनी फावर्स की सोच एक ही थी।

८. शिक्षा प्राप्ति का परिणाम –

'अंतर्वशी' उपन्यास की अंजी अंततः स्वार्थी गैर जिम्मेदारी शिवेश को छोडने का निर्णय लेती है। वाना प्रारंभ से ही

राहुल के प्रति आकर्षित है। राहुल शिवेश का मित्र रहा है। वाना ने कभी भी उसने अपने भीतरी इच्छा संसार को प्रकट नहीं होने दी। वह नये जीवन साथी के रूप में राहुत को स्वीकार करती है। असमर्थाताओं से घिरा शिवेश वाना का अपने जीवन से दूर जाना सहन नहीं कर पाता और आत्महत्या कर लेता है।राहुल की पूर्व पत्नी अंजली रही है। वह बांगला देशी है। उसका अमेरिका स्थित डॉक्टर पति नर्स के चक्कर में उसे तलाक देता है। विदेशी महौल में अंजली अकेली ही अपने दो बच्चो की देखभाल करती है।

हरिमोहन द्वारा लिखित उन्यास 'दौर में हमसफर' सशक्तीकरण का एक सुंदर उदाहरण है। उपन्यास की नायिका अमृता विवाह की विषमता जन्य परिस्थितियों से आबद्ध है। अमृता के मन में एक द्वन्द निरंतर चलता रहा। उसकी छटपटाटहट अपनी गृहस्थी को न बचा पाने की पीडा व जीवन में अपने से मुक्त होने के लिए तलाक के निर्णय के प्रति अश्वस्त है। साथ ही वह अपना स्पष्ट दृष्टिकोण भी रखती है। वस्तुतः अमृता अपने प्रश्नानुकूल चिंता के कारण एक सचेतन नारी के रूप में है।

९. गाँव में शिक्षण व्यवस्था –

मृदुलाजी के 'कठगुलाब' के सभी प्रमुख नारी पात्रों के संघर्ष में पुरूष से अलग होकर अकेले जीने की एक दृष्टि देखी जा सकती है। असीमा एक सशक्त एवं आत्मनिर्भर पात्र है। असीमा के सामने और तमाम सवाल हैं। असीमा एक सशक्त एवं आत्मनिर्भर पात्र है। असीमा के सामने और भी तमाम सवाल है, मजदूरी मुक्त अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा,

गाँव और शहर की दलित औरतों के लिए सरकारी उद्योग आदि। लेकिन उच्च वर्ग के प्रतिनिधित्व नौकरशाही और राजनीतिज्ञ यह सब नहीं होने देंगे। उसके विचार से पब्लिक स्कूलों को बंद कर देना चाहिए। सबके लिए अमीर हो चाहे गरीब, स्थानीय स्कूलों में शिक्षा लेना अनिवार्य होना चाहिए। 'चाक' उपन्यास में अतरपुर गाँव विकास के नाम पर आनेवाली सहायता धनराशी ग्राम प्रधान फत्तेसिंह हड़पना चाहता है। ग्राम पंचायत उनके कार्यकलापों के जाल में चलने वाली सत्ताधीशों की गिद्द दृष्टि व षड्यंत्र का पर्दाफाश हुआ है। स्कूल बनने की झूठी योजना बनाकार चुनाव में जीतने का प्रयास रहता है। गाँव विकास या स्कूल बल्डिंग के लिए सरकार की ओर से मिलने वाली धनराशि गायब है।

१०. अभिनय कला के संदर्भ में –

'मुझे चाँद चाहिए' की वर्षा पात्र का ह्रदयस्पर्शी चित्रण भी इस उपन्यास में किया है। वर्षा पढाई में बहुत तेज थी।

हर काम को श्रद्धापूर्वक पूरा करती थी। वे अपने नाम से खुश नहीं थी तो उसने अपना नाम ही बदल दिया। पहले उसका नाम यशोदा था। उसे बदलकर वर्षा रख लिया। कॉलेज में पहली बार दिव्या ने 'ध्रुव स्वामिनी' नाटक का प्रदर्शन किया जिससे शहर में उसका नाम गूँजने लगा। जिस देश के निवासियों को उन्होंने कहा में जितनी भी लोकतांत्रिक सरकार बनीं, सभी ने नारी शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देते हुए, महिला कल्याण के लिए समय-समय पर अनेक कार्यक्रमों एवं योजनाओं का निर्माण की है।

११. स्त्री ही स्त्री का सहारा –

वीणा सिन्हाजी का उन्यास 'पथ प्रज्ञा' की नायिका माधवी को उसकी दासी वरूणिका हित सोचने वाली स्त्री है।

इसके अन्तर्गत माधवी व वरूणिका जो पूरक बने रहती है इसका भी वर्णन खूब मिलताहै। वरूणिका बचपन से ही राजमहल में रहती है। उसने माधवी अपनी सहेली के रूप में अपनाया है।

स्त्रियों का लेखन हिंदी का सबसे सशक्त लेखन है। इसके मुकाबले पुरूष उपन्याकारों की दुनिया लगभग पीछे छूट गई है। ऐसा इसीलिए क्योंकि महिला कथाकारों ने अपनी रचनाओं में यथार्थ दर्ज किया है।

खासी समाज और संस्कृति

शाईलिन खरपुरी

शाईलिन खरपुरी

खासी संस्कृति में सिर्फ लोक नृत्य या लोक गीत ही नहीं आता है बल्कि इसके अंदर दरबार (सभा का तरीका) भी आता है।

खासी जनजाति के अंतर्गत कई और जनजाति भी आते है। इन सबके रहन-सहन, खान-पान व पहनावा अलग-अलग हैं। यकिनन यह सब अलग-अलग है, लेकिन संस्कृति लगभग एक जैसी ही है। पूरे खासी जनजाति में वंश माँ के जाति से अवरोह होता है। 'स्त्री' खासी जनजाति में अहम किस्सा निभाती है। वह कुल की उत्तराधिकारी होती है। खासी जनजाति में " Ka tip kur tip kha" सबसे सर्वश्रेष्ठ है। 'kur' यानि माँ के तरफ का वंश `kha` पिता के तरफ का वंश/ खासी बच्चे माँ का कुलनाम का प्रयोग करते है। एक ही कुल में शादी करना सख्त मना है तथा पाप माना जाता है।

अगर हम पुरूष के तरफ देखे तो हम पाएँगे कि पुरूष को कई नियम निभाने पड़ते है। भारत वर्ष के अन्य पुरूषों की तरह खासी पुरूष भी दरबार चलाता है। वह अपने बहन के घर में जीवन-मरण में मामा का अहम किरदार निभाता है और अपनी पत्नी के घर में एक दृढ़ निश्चय अटल पिता का किरदार निभाता है।

खासी दरबार (यानि सभा) :- जो भी पुरूष दरबार में आता है उसका मन बिल्कुल साफ होना चाहिए। जो भी पुरूष दरबार में बोलने के लिए खड़ा होता है उसे खुद एक मिसाल और स्वच्छ मन का उदाहरण होना पड़ता है। दरबार में जो भी राय लिया जाती है उसे सभी को मानना पड़ता है। दरबार में २ वर्ष से कम और ७० वर्ष से अधिक के पुरूषों का आना मना है। दरबार बिना दरबारी के कभी शुरू नहीं किया जा सकता है। राजा और प्रजा के बीच भी कभी दरबार नहीं हो सकता है लेकिन राजा और दरबारियों के बीच सभा की जा सकती है और जो भी निर्णय उनके बीच लिया जाता है वह सबको माननी पड़ती है। खासी जनजाति में दरबार को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया जाता है। दरबार में गाली- गलोज करना, शराब पीकर आना और झूठ बोलना सख्त मना है। मुँछो का भी अलग किरदार है क्योंकि बिन मुँछ के पुरूष को सभा में बैठना मना है।

दरबार में एक बार जो निर्णय लिया जाता वह फिर कभी नहीं बदलता।

खासी जनजाति में दरबार को भगवान का दरबार भी कहा जाता है क्योंकि वे मानते है कि वे भगवान के कारण ही गैर-कानूनी कार्यो से दूर रह सकते है। दरबार में सिर्फ निर्णय और कानून ही नहीं बनाए जाते है बल्कि लोगो की शिकायत पर भी विचार-विमरश किया जाता है। यदि शिकायत दो लोगो के बीच हो और उन दोनो के बीच सुलह ने हो तो दोनो की मंजूरी से तीसरे आदमी को बुलाया जाता है। यह तीसरा पुरूष उन दोनों की पहचान का होना चाहिए। इस तीसरे पुरूष को खासी में साईफला कहा जाता है। यह गवाही के रूप में काम करता है। इस साईफला के लिए भी एक प्रथा होती है। इसे लौकी की बनी कलश व बाण दिया जाता है और उसे कसम खाना पड़ता कि व सही गवाही देगा। उसके साथ- साथ उसके परिवार के लोगों को भी कसम खानी पड़ती है कि व सही गवाही देगा। उसके साथ- साथ परिवार के लोगो को भी कसम खानी पड़ती है कि जो कुछ वह बोलेगा परिवार के लोग गवाह होंगे। खासी जनजाति यह विश्वास रखते है कि जो भी साईफला के रूप में जो भी आयेगा वह स्वच्छ मन व भगवान से डरने वाला होना चाहिए, क्योंकि जो भी वचन उसके मुँह से निकलेगा और जो भी वह बताएगा वह आखिरी निर्णय होगा।

इसी आखिरी निर्णय की बात को लेकर तब से आज तक को भी साईफला के रूप में नहीं आना चाहता है।

खासी लोगो की और एक प्रथा है जिसमें वे पूजा पाठ के लिए चावल, मुर्गा और मुर्गी के अंडे का प्रयोग करते है। इस प्रथा को खासी ईसाई धर्म के लोग नहीं करते है और नही पूजा में बैठते है। खासी जनजाति में लोक नृत्य और लोक गीत का भी अधिक प्रभाव है। वैसे तो खासी जनजाति के कई लोक नृत्य और तरह-तरह के वाद्य और ढोलक होते है। लेकिन इस संगोष्ठी में सिर्फ दो प्रसिद्ध नृत्य के बारे में थोड़ा कहना चाहूँगी। यह दो नृत्य है `ka shad suk Mysiem` शाद कुमिन्सेम और शाद नोङक्रेम है "Shad Nongkrem " जब से संस्कृति का प्रभाव पुरी दुनिया में हुई तब से खासी नृत्य की भी संस्कृति के साथ गहरा प्रभाव पड़ा है। यह दो नृत्य खासी जनजाति की शान बनाई ऱखी है। पहनावा में लड़की सोने से जड़ा रेशम का कपड़ा लगाती जिसे 'khor' खोर कहा जाता है, सिर में मुकुट पहनती है और मुकुट के पीछे फूलों का गुच्छा लगाती है। सोने व चॉदी के आभूषण लगाते है और साथ में ठीक मूँगा (corah) की बनाई माला लगाते है। यह दोनो नृत्य खुले मैदान में होती है। स्त्री मैदान में नंगे पैर उतरती है और अपना नृत्य शुरू करती है और पुरूष जूते पहन कर रस्त्री के चारो ओर चक्कर लगाकर घूमता है। परूष का पहनावा है पगड़ी जिसे (Spong या janspong) सपोङ कहते है। रेशम के कपड़े से बनी धोती पहनता है। उसके बाए हाथ में सिम्पयाह (Sympiah) और हाथ में तलवार होता है। वाद्यय यंत्र और बाजे भी तरह-तरह के होते है। इन सब में ढोल दो प्रकार का होता है। लड़कियो के लिए अलग और लड़को

के लिए ढोल है उसे "ksing kynthai" कीसंग किंथई ओर लड़को के लिए "ksing Shynrang" कसिंग शिराङ कहा जाता है। नृत्य के रीति रिवाज पहले से लेकर आज तक उसी तरह से ही चल रहे है।

कहने और लिखने के लिए तो बहुत है लेकिन मैं अपना परिपत्र यही समाप्त करती हूँ।

मिजोरम

प्रेरणा शर्मा

बंगलुरू, कर्णाटक

हमारे देश के उत्तरपूर्व राज्य संयुक्त रूप से- सेवन सिस्टर्स के नाम से जाने जाते हैं। इन्हीं राज्यों में से एक राज्य है मिजोरम। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह राज्य छोटा है परन्तु बहुत सी विशेषताओं से ओतप्रोत है। मिजोरम शब्द का संधिविच्छेद किया जाये तो रममिजो होता + अर्थाथ मिजो लोगों की भूमि। मिजो इस राज्य प्रमुख हैं। इस राज्य की विभिन्न जनजातियों की अपनी भाषा व संस्कृति है। मिजोरम जनजातियों की परम्परा भी भिन्न हैं। संक्षिप्त शब्दों में कहें तो मिजोज व मिलनसार होते है।

प्राकृतिक देन...

वैसे तो सभी उत्तरपूर्वी- राज्यों में प्राकृतिक छटा सभी आयु वर्ग को लुभाती हैं। हिमालय की शिवालिक पहाड़ियों में बसे इस राज्य में हरियाली देखने लायक है। इस राज्य में बसने वाले मिजो जाति की परम्परा भी निराली है। संक्षिप्त शब्दों में कहें तो मिजोज शान्त व मिलनसार होते हैं। प्रकृति का उपहार है। यहां का फ्लोरा एवम् फोना विशेषता से परिपूर्ण है। प्रकृति प्रेमी यहां के लेण्डस्कोप ब्लूहिल्स, माउन्टेनस, क्लीफ झीलें कलकल करती हुई नदियां जोखिम भरी क्रियाकलापों से अनायास ही आकर्षित होते हैं। मिजोरम राज्य का मौसम साल भर सुहावना रहता है, ना ज्यादा गर्मी ना ज्यादा सर्दी।

भाषाः-

सामान्यतः मिजोरम मे मिजो भाषा बोली जाती है। इस राज्य मे विभिन्न जनजातियों का वास है। इन सभी जनजातियों की भाषा भी भिन्न है। मुख्यतः यहा पर लुशाई आसो, चलो, हालत, हिसार, लाई, लुशाई, मारा, मियामी, पेट, थाडो, लुशाई व कुकी है आदि भाषाऐ बोली जाती हैं। हमारे देश भारत में माना जाता है कि भाषाऐ प्रत्येक दस किलोमीटर पर बदली जाती है। मिजोरम में भी इसे अनुभव किया जा सकता है यहाँ सरकारी कार्य अंग्रेजी भाषा में होते है।

कृषिः–

भारत एक कृषि प्रधान देश है। प्रत्येक राज्य मे किसी न किसी प्रकार की पैदावार की जाती है। मिजोरम मे भी खेती की जाती है। इस राज्य मे मुख्यतः चावल की पैदावार होती है। मिजोज का मुख्य भोजन भी चावल है। बहुत प्रकार के मोसमी फल व सब्जियों की यहां उपज होती है। पैशन फ्रूट व साफी बहुतायत मे पैदा होते हैं। अन्य पहाडी राज्य की तरह यहा भी खेती के लिए झूम विधि का प्रयोग किया जाता है।

भोजनः–

प्रायः मिजोरम राज्य के जनजातिय लोग मान्साहारी होते है। आज के ग्लोबलाइजेशन के समय मे मिजोज भी सभी प्रान्त के वयन्जनो का स्वाद लेना पसंद करते है। उबला व कम मसालेदार भोजन इनका पसंदीदा खाद्य है। चावल के आटे व केले से तैयार की हुई मिठाई कोटपीठा मिजोरम का प्रसिद्ध मिठाई है।

त्योहारः–

फसल कटाई के समय मिजोरम में विभिन्न त्योहार बहुत ही हर्षोल्लास से मनाया जाते हैं। चापर कुट, मिम कुट, व पाल कुट यहां के प्रमुख त्योहार हैं। यहां सभी त्योहार नृत्य के रूप मे मनाये जाते हैं। नृत्य के रूप में मिजोज अपनी खुशी व्यक्त करते है।

चापार कुटः– मार्च के प्रथम सप्ताह मे यह त्योहार नृत्य प्रस्तुति के रूप में मनाया जाता है। यह नृत्य चैलम नाम से प्रसिद्ध है। यह नृत्य बसन्तोत्सव के जैसा होता है। स्त्री व पुरूष दोनो मिल कर इस नृत्य को निभाते है।

मिमकुटः– यह त्योहार अगस्त-सितम्बर महीने मे मक्का की फल कटाई के समय मनाया जाता है-

पालकुटः– मिजोरम मे त्योहार दिसम्बर-जनवरी के महीने मे मनाया जाता है-।

उपरोक्त सभी त्योहार के अतिरिक्त मिजोरम सरकार दो और त्योहार प्रदेश स्तर आयोजित करती है। प्रथम त्योहार जिसे एन्तुनिरयम के नाम से जाना जाता है, यह सितम्बर माह मे आयोजित किया जाता है। दूसरा त्योहार थालफावंग है जिसे नवम्बर मे आयोजित किया जाता है।

उपरोक्त सभी त्योहार के साथ-साथ क्रिसमस भी यहा धूमधाम से मनाया जाता है। देखने से लगता है कि मिजोज पश्चिम संस्कृत से प्रभावति है, परन्तु परम्पराओं को भी बखूबी निभाते है। क्रिसमस पर सभी मे भाइचारे की भावना देखी जा सकती है, जिसमे परम्परा व आधुनिकता का समायोजन देखा जा सकता है।

दर्शनीय स्थलः–

वैसे तो मिजोरम मे बहुत से दर्शनीय स्थान है निम्न वर्णित स्थल प्रकृति के करीब है।

ह्मूमीफागः– यह प्रसिद्ध स्थ्ल राजधानी एजोल से ५० किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह पीक पर स्थित है, घने जंगलो से घिरा यह क्षेत्र सैलानियो की पहली पसंद है। इसका संचालन मिजोरम सरकार द्वारा किया जाता है। यह बहुत ही रमणीक ठहरने का स्थान है।

रेइकः– राजधानी से ३५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है, यह स्थान ट्रेकिंग के लिए प्रसिद्ध है।

सारांशः–

वर्तमान समय देखते है कि देश के विभिन्न भागो मे उपद्रव की कोई कोई घटना होती रहती है। परन्तु मिजोरम एक शान्त राज्य है। ईमानदारी मिजोज के स्वभाव मे है। मिजोरम जाने की मुख्य सडक के किनारे पर छोटी-छोटी अस्थायी दुकाने होती है, इनमें बहुत सी सब्जिया व फल बिक्री के लिए रखते होते है। इन पर दुकानदार नहीं होता है। वस्तुओं के मूल्य लिख दिये जाते है राहगीर सामान खरीदकर उनका मूल्य एक डिब्बे में रख देते है। ऐसा भी देखा गया है कि लोग ज्यादा पैसे रख जाते है। यह मिजोज की सादगी का जीता जागता उदाहरण है। आधुनिकता अभी इस स्थान को छू नही पाई है। संगीत मिजोज की पहचान है। इस विरासत को इन्होने संजो कर रखा है। किसी भी कारणवश मिजोज मे कोई विवाद हो जाता है तो सभी लोग आपस में बातचीत कर सुलझा लेते है। ऐसा प्रतीत होता है मिजोरम की संक्षिप्त जानकारीः-

जनसंख्याः- २५६५७५८
शैक्षणिक, स्तरः- ९८%
भाषा मिजोः-, अंग्रेजी
धर्म ईसाईः-
अन्तराजीय सीमा-आसामः- १२३ किलोमीटर
त्रिपुराः- ६६ किलोमीटर
मणिपुरः- ९५ किलोमीटर
अन्तरराष्ट्रीय सीमाः-
म्यांमारः- ४०४ कि.मी.
बंग्लादेशः- ३१८ कि.मी.
मौके का लाभ उठाएं

समय निकाले एक बार अवश्य ही प्रकृति का अनुभव करने के लिए मिजोरम की यात्रा करें।

पूर्वोत्तर भारत और सिख गुरूओं का इतिहास

आलोक सिंह

केन्द्रीय विद्यालय, नेहू, शिलांग

प्रकृति की रमणीय गोद में बसा पूर्वोत्तर विशाल भारतवर्ष का एक अभिन्न अंग है, जो असम, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, नागालैण्ड, त्रिपुरा और सिक्किम-इन आठ प्रदेशों का समुच्चय है। नाना जाति-उपजातियों की मिलन-भूमि कहलाने वाला यह पूर्वोत्तर भारतवर्ष के मूल भू-भाग से दूर पर स्थित होते हुए भी प्राचानीकाल से ही सांस्कृतिक दृष्टि से सम्बद्ध रहा है। पुण्य भूमि भारत वर्ष की मूल सार्वभौमिक संस्कृति की अविरल धारा के प्रवाह से यह पूर्वोत्तर सदा प्रेरित- प्रभावित रहा है। 'सात बहनें और एक भाई' के रूप में प्रसिद्ध इस पूर्वोत्तर भारत के उक्त आठों प्रान्तों के निराले एवं वैचित्रपूर्ण समच्चय में सभी प्रदेशों का अपना प्रमुख एवं विशिष्ट स्थान है। यहां के समाज में व्याप्त लोक गीत, लोक कथा, लोकनीति, लोकविश्वास इस समाज को नया आकाश प्रदान करते हैं। इसकी यही विशेषता हर किसी को अपनी ओर आकर्षित करती है। इस भूखंड को अगर हम पौराणिक दृष्टि से देखें तो महाभारत काल से ही इसका सांस्कृतिक ऐतिहासिक संबंध रहा है। हम देखते हैं कि महाभारत काल से ही भगवान कृष्ण, अर्जुन, भीम का पूर्वोत्तर के साथ एक पारिवारिक नाता भी रहा है। श्री कृष्ण का अरूणाचल प्रदेश के साथ, अर्जुन का मणिपुर के साथ और भीम का नागालैंड के साथ। भारतवर्ष के विशाल फलक पर लगभग तेरहवीं शती से सत्रहवीं शती तक परिवयाप्त अखिल भारतीय भक्ति-आन्दोलन मध्यकालीन धर्म-अध्यात्म- साधना के इतिहास की अन्यतम उल्लेखनीय घटना है। साम्य, मैत्री, दया, करूणा, प्रेम अहिंसा, सह- अस्तित्व, विश्वात्मबोध एवं लोक-तांत्रिक मूल्यों पर आधारित इस उदात भक्ति-आन्दोलन की प्रबल धारा से पूर्वोत्तर भारत की भूमि भी आलोइत एवं आन्दोलित हुई। जिसके कर्णधारों में विष्णु-भक्त महापुरूष श्रीमन्त शंकरदेव (ई. १४४९-ई. १५६८) का नाम लिया जाता है। उन्होंने सर्वग्राहिणी भारतीय संस्कृति के मुखपत्र-सदृश 'श्रीमदभागवत् पुराण' और 'श्रीमदभागवत् पुराण' और 'श्रीमदभागवत् गीता' के आधार पर 'एकशरण भागवती वैष्णव धर्म' ('एकशरण नाम धर्म' या 'महापुरूषीया धर्म') का प्रवर्तन कर सार्वभौमिक भातृत्वबोध एवं मानवतावाद के सर्वत्र प्रचार-प्रसार के द्वारा

प्रवर्तित इसी नव-वैष्णव आन्दोलन के व्यापक परिदृश्य में 'नामघरीया संस्कृति' समाविष्ट हैं। १५वीं-१६वीं शती में प्रवाहित होने वाली सत्रीया एवं नामघरीया संस्कृति की वेगवती धारा ने मध्यकालीन असम-भूमि में सांस्कृतिक नवोत्थान का एक ऐसा ज्वार उठाया जिसकी लहरें वर्तमान समय तक विद्यमान हैं। इस नामघरीया संस्कृति ने न केवल धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्र में सर्वसाधारण असमीया जनता को आलोकित किया, वरन् सामाजिक-सांस्कृतिक दिशा में भी अपना विशिष्ट योगदान दिया। कुल मिलाकर पूर्वोत्तर भारत अपनी सामाजिक सांस्कृतिक राजनितिक धार्मिक भौगोलिक और ऐतिहासिक महत्व के कारण हमारे देश में एक विशिष्ट स्थान रखता है। यहां के सभी राज्यों में समोबेश सभी धर्मावलंबी के लोग रहते हैं और सभी का्पना ऐतिहासिक और पौराणिक इतिहास भी है।

पूर्वोत्तर भारत में सिख धर्म एवं सिख गुरूओं के इतिहास पर प्रकाश डालें तो असम राज्य के साथ सिख धर्म के प्रवर्तक गुरू नानक देव और सिख धर्म के नवें गुरू, गुरू तेज बहादुर का ऐतिहासिक संबंध रहा है। ऐतिहासिक विवरणों से ज्ञात होता है कि सिख धर्म के प्रर्तक गुरू नानक देव अपने विश्व भ्रमण के दौरान बांग्लादेश के ढाका से होते हुए असम के धुबड़ी जिले में स्थित गुरूद्वारा दमदमा साहिब स्थल पर आकर ठहरे थे. इसी दौरान सन् १५०५ ई. में उनकी भेंट श्रीमंत शंकरदेव से भी हुई थी और उस समय गुरू नानक देव की उम्र ३६ वर्ष तथा शंकरदेव की ५६ वर्ष थी। गुरू नानक देव और श्रीमंत शंकरदेव के विचार स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए सूर्यकुमार भुइयां अपनी पुस्तक 'बैकग्राउंड ऑफ असमीज कल्चर' में लिखते हैं कि–"दोनों महापुरूषों में गहनचिंतन-मनन हुए की असम में प्रचलित तंत्र-मंत्र और शाक्तधर्म के कुप्रभाव से स्थानीय लोगों का उद्धार र उन्हें किस तरह संस्कारित किया जाए? जनता को किस प्रकार जादू-मंत्र के अभिशाप से मुक्त करा भगवद भक्ति में लगया जाए– आदि।"[1]

इसके बाद कहा जाता है कि गुरू नानक देव असम के धुबड़ी से रंगामाटी, जोगीगोफा, ग्वालपाड़ा, कामाख्या हाजो, सदिया, अरूणाचल प्रदेश के परशुराम कुंड से होते हुए तिब्बत चले गए। वहां से चीन, जापान, फिलीपींस, जावा, सुमात्रा और बर्मा की यात्रा करते हुए मणिपुर की राजधानी इंफाल के रास्ते पुनः भारत लौटे। सिख धर्म के नवें गुरू, गुरू तेग बहादुर के असम के धुबड़ी में आते हैं तो व वहां पर एक गुरूद्वारे का निर्माण करवाते है। नवम सिख गुरू तेग बहादुर असम आने के बारे में वर्णन मिलता है कि अहोम राजा चक्रध्वज सिंह के मुगल विद्रोह को नष्ट करनेके लिए मुगल सेनापति राम सिंह को औरंगजेब असम जाने हेतु प्रितनिय्कुत करता है। राम सिंह अपनी इस यात्रा में अपने साथ गुरू देज बहादुर को भी असम आने के लिए अनुरोध करते हैं और गुरू तेज बहादुर इस अनुरोध को स्वीकार भी कर लेते हैं। इस संबंध में सांवरमल सांगानेरिया अपने यात्रा वृतांत 'ब्रह्मपुत्र के किनारे' में लिखते हैं कि– "असम आते समय शुरू से ही राम सिंह यहां के जादू टोने से भयभीत था, इसलिए उसने सर्वप्रथम नवम सिख गूरू

तेग बहादुर से मिकर उन्हें अपनी सेना के साथ अमस आने के लिए राजी किया था। राम सिंह के नेतृत्तव में मुगल सेना ने धुबड़ी से २४ कि.मी. दूर गंगा माटी में अपनी छावनी बनाई। गुरू तेग वहादुर जब धुबड़ी आए, दब स्वयं यहीं दमदमा साहब में रूके, जहाँ गुरू नानक देव ने विश्राम लिया था।"[2]

फरवरी १६६९ ई. के शुरूआती माह में कामरूप पहुँचने पर गुरू तेज बहादुर ने धुबड़ी में अपना डेरा डाला जबकि मुगल सेनापति राम सिंह और उनकी सेना ने रंगमती किले में डेरा डाला। हालांकि मुगल सेना आश्वस्त थी लेकिन यह सुनिश्चित नहीं थी कि उनकेसाथ गुरू तेज बहादुर असमियों के जादू ओर टोने के बुरे प्रभाव को नष्ट करने में सक्ष्म होंगे या नहीं। असम के जादू टोने के स्वरू पर प्रकाश डालतेहुए सांवरमल सांगानेरिया लिखते हैं कि- "मुगल आक्रणकारियों को पराभूत करे के लिए अहोम राज् चक्रध्वज सिंह ने अपने राज्य की जादू विद्या में पारंगत महिलाओं को भी तैनात कर रखा था। उनमें से एक नेताई धुबनिनी की वंशधर थी। वह समझ गयी की उसके जादू को निष्क्रिय करने का समार्थ्य केवल गुरू तेज बहादुर में ही है। इसलिए उसने उन पर तरह-तरह से अपनी विद्या का प्रयोग किया। सब वार निष्फल चले गे तो उसने क्रोधित होकर गुरूदेव को मारनेके लिए २६ फुट लंबी एक बड़ी शिलाकी मूठ चलाई, जो गूरू की आध्यात्मिक शक्ति के प्रभाव से दो टुकड़े होकर जमीन में धंस गयी। इस बार उसने एक बड़े पीपल के पेड़ को मूठ के रूप में गुरू पर छोड़ा, जो आज भी गुरूद्वारा में भक्ति टीला पर जस-का –तस खड़ा है। धुबिनी ने और भी तरह-तरह से अपने काले जादू को उन पर प्रयोग किए परंतु उसके सभी वार बेकार गये।आखिर हारकर वह गुरू की शरण में आयी।उनके पांवों पर गिरकर उसने क्षमा मांगी और उनसे आर्शीवाद मांगा कि वे ऐसा वर दें, जिससे उसका नम सद के लिए अमर हो जाए। गुरू जी ने भविष्य में अपनी काली विद्या का प्रयोग न करने का उससे वचन लेकर कहा कि यह जगह आगे से उसके नाम से जानी जाएगी।"[3]

गुरू तेग बहादुर ने जादू विद्या में पारंगत महिलाओं को आश्वासन दिया कि वह राजा राम सिंह और अहोम राजा के बीच शांति लाने के लिए कार्य करेंगे, जिसके लिए उन्हें दोनों पक्षों का ह्रदय परिवर्तन करना आवश्यक था। नतीजन, उन्होंने राम सिंह को शांतिपूर्ण बातचीत माध्यम से अपने शासन के उद्देश्यों को प्राप्त करने की सलाह दी और कहा कि जब तर जादू विद्या में पारंगत महिलाएं उन पर हमला न करें तब तक वह भी हमला नहीं करेंगे। बाकी कहानी इतिहास का एक हिस्सा है कि कैसे वह मुगल सेनापति राम सिंह और असम के अहोम राजा के बीच मदभेदों को दूर करने में सफल रहे। इस कार्य के लिए कृतज्ञ अहोम राजा ने गुरू तेग बहादुर को कामाख्या मंदिर में आमंत्रित किया जहां उनका बहुत सम्मान किया गया।

गुरू तेग बहादुर के प्रयासों से लाए गए शांति समझौते की खुशी का अवसर मुगल और अहोम सेनाओं द्वारा गुरू नानक की दरगाह पर संयुक्त श्रद्धांजलि के रूप में मनाया

गया। कहा जाता है कि धुबड़ी की शांति का टीला दोनों सेना के सैनिकों द्वारा अपनी ढालों पर रखी लाल मिट्टी के साथ खड़ा किया गया था। गुरू तेग बहादुर के सफल शांति प्रयासों का यह स्थाई स्मारक आज भी धुबड़ी में स्थित है। इस संदर्भ पर अपने विचार रखते हुए 'ब्रह्मपुत्र के किनारे' अपना यात्रा वृतांत में सांवरमल सांगानेरिया लिखते हैं कि – "घटना जिस रूप में भी हुई होगी किंतु इस गुरूद्वारे में एक घेरे में रखी एक विशाल लंबी शिला के बारे में मान्यता है कि यह वहीं शिला है जिसेधुबिनीने मूठ के रूप में गुरू तेग बहादुर पर चलाया था। दमदमा साहब गुरूद्वारे आज भव्य रूप में खड़ा है। शुरूआत में यह माटी लाकर बनाया था। इसी स्थान पर गुरू तेग बहादुर और उनके साथ आए सिख सैनिकों ने माटी लाकर बनाया था। इसी स्थान पर गुरू तेग बहादुर को पटना से अपनेपुत्र गोविंद सिंह के जन्म का शुभ समाचार प्राप्त हुआ था। उस पुत्र के मस्तक पर उनकी अंगूठी के निशान की तरह का चिन्ह होगा।"[4] (असम के धुबड़ी में स्थित दमदमा साहब गुरूद्वारा)

इन सबके अतिरिक्त यह उल्लेख मिलता है कि गुरू तेग बहादुर के साथ आए सैनिकों में से कुछ यहीं रूक गए थे, जिनके वंशज आज भी धुबड़ी में रहते हैं। दमदमा साहब को आज धुबड़ी साहब भी कहा जाता है। इसी गुरूद्वारे में पूर्वोत्तर में पहलीबार सिख धर्म के रीति-रिवाज के अनुसार निशान साहब फहराया गया था। यहां से मानव कल्याण के अनेक कार्य भी चलते हैं। आज यहां देश के हर कोने से सिख मत्था टेकने आते हैं।

असम में सिख समुदाय के विकास-यात्रा के संदर्भों के बारे में कई असमिया साहित्यकारों के साहित्य से भी जानकारी मिलती है। इनमें लक्ष्मीनाथ बेजबरूआ का उपन्यास पोदुमकुँवारी (१९८०), जोनाकी दाईबचंद्र तालुकदार का नाटक हरदत (१९३५) और रजनीकांत बरदलोई का उपन्यास ममोती (१९००) एवं दंडुआ द्रोह (१९१९) आदि हैं।

कुल मिलाकर पूर्वोत्तर भारत के साथ सिख समुदाय का एक पुराना नाता रहा है। पूर्वोत्तर भारत के आठों राज्यों असम, मेघालय, नागालैण्ड, मणिपुर, त्रिपुरा अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम और सिक्किम राज्यों में पवित्र स्थल गुरूद्वारा आपको देखने को मिलेगा। जो समय-समय पर जरूतमंदों को लंगर के माध्यम से तथा अन्य जरूरी सेवाओं के द्वारा एक दूसरे की सहायता करते रहते हैं। इसके साथ-साथ आठों राज्यों में व्यवसाय क्षेत्र में भी सिख समुदाय के लोग अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ–

१. ब्रह्मपुत्र के किनारे, सांवरमल सांगरेरिया, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृष्ट-३२२
२. वही, पृष्ठ- ३२२
३. वही, पृष्ठ-३२२-३२३
४. वही, पृष्ठ – ३२३

जलवायु परिवर्तन की समस्या

रिया धर

शोधार्थी, पर्यावरण अध्ययन विभाग,पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)

हमारी पृथ्वी और उसके आस-पास मौसम के पैटर्न में निरंतर परिवर्तन और जवलायु परिवर्तन को जन्म देने वाली जलवायु परिस्थितियों में दीर्घकालिक परिवर्तन हो रहे हैं। जवलायु परिवर्तन अब केवल वैज्ञानिक अध्ययनों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसका दायरा साहित्यिक अध्ययन तक भी फैला हुआ है। जलवायु परिवर्तन ने क्लाइमेट फिक्शन या क्लि-फआई को जन्म दिया है, जो साहित्य की एक उभरती हुई शाखा है जो मानव समाज पर जलवायु परिवर्तन के बुरे प्रभावों को चित्रित करती है।

संयुक्तराष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेशवन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) के अनुसार,जलवायु परिवर्तन जलवायु परिस्थितियों में परिवर्तन का परिणाम है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानव गतिविधि के लिए जिम्मेदार है जो वातावरण की संरचना को बदल देता है और जो तुलनीय समय अवधि में प्राकृतिक जलवायु परिवर्तनशीलता के अतिरिक्त मनाया जाता है। इन परिवर्तनों को कुछ प्राकृतिक कारणों के कारण तेज वृद्धि देखी गई। औद्योगिक क्रांति१७०० से १८०० के दशक में कृषि- आधारित अर्थवयवस्था से उद्योग परिवर्तन के लिए प्रमुख बदलाव की अवधि है, जो ग्रेट ब्रिटेन में शुरू हुई और जल्दी से दुनिया के बाकी हिस्सों में फैल गई। इस परिवर्तन में कुछ नाम रखने के लिए नए ऊर्जा स्रोतों, नई मशीनों और अन्य तकनीकी प्रगति का उपयोग शामिल था। इससे जीवाश्म ईंधन जलाने वाले कारखानों की संख्या में वृद्धि हुई जिसके परिणामस्वरूप कार्बन डाइऑक्साइड और अन्य ग्रीन – हाउस गैसों में वृद्धि हुई जिससे वैश्विक तापमान में वृद्धि हुई। यह कुछ ऐसा नहीं है जो रातों रात हुआ है बल्कि यह सैकड़ो वर्षों से जलवायु परिवर्तन को जन्म देने का परिणाम है।

जलवायु परिवर्तन के कारण वातावरण के तापमान में वृद्धि के कुछ गंभीर प्रभावों में शामिल हैः

(i) समुद्र के जल स्तर में वृद्धिजो विभिन्न कारणों से हो सकती है जैसे ध्रुवीय क्षेत्र में बर्फ का पिघलना/तापमान में वृद्धि के कारण हिमनद जो समुद्र में पानी की तेज

गति का कारण बन रहा है, जल निकाय का विस्तार जब यह गर्म होता है और आगे बढ़ता है अधिक स्थानघेर लेता है। समुद्र के स्तर में वृद्धि से तटीय क्षेत्रों के लिए पैदा हो गया है जिसके परिणामस्वरूप मानव बस्ती क्षेत्रों और कृषि क्षेत्रों में लगातार और अधिक तीव्र बाढ़ आ रही है जो वर्तमान समय की तुलना में वर्ष २०५० तक १० गुना अधिक होने की उम्मीद है, इससे परिवर्तन भी होगा। समुद्र के तापमान में जो सभी समुद्री प्रजातियों के लिए जैव विविधता और आवास की स्थिति को सीधे प्रभावित करता है। समुद्र की गर्मी और समुद्र का अम्लीकरण भी तापमान में वृद्धि के कारण देखे जाने वाले दुष्प्रभाव हैं जो समुद्री आबादी के आवास को बदल देते हैं। विभिन्न अध्ययनों ने बढ़ते समुद्री जल सत्र को भीषण तूफान और तूफान से जोड़ा है।

(ii)समग्र तापमान में वृद्धि वाष्पीरण की प्रक्रिया को तेज करती है बदले में भूमि क्षेत्र विशेष रूप से गर्मियों में सूख जाती है जो सूखे जैसी स्थिति का कारण बन जाती है। पाक्षिक पत्रिका डाउन टू अर्थ, वर्ष २०२१ में २०२० की तुलना में सूखे जैसी भूमि की स्थिति में ६२% की वृद्धि दर्ज की गई। राजस्थान, गुजरात, ओडिशा और नागालैण्ड को वर्ष २०२१ में कम वर्षा पैटर्न के कारण सूखे की स्थिति का अनुभव करने के लिए जाना जाता है।

(iii)अन्य पर्यावरणीय कारकों जैसे तापमान में वृद्धि से जुड़े जलवायु परिवर्तन ने गर्म और शुष्क परिस्थितियों को जन्मदिया है, नमी की अतिरिक्त कमी के परिणामस्वरूप लंबी और व्यापक जंगल की आग लग सकती है। इस शुष्क स्थिति के कारण जंगल की आग, प्राकृतिक और मानव निर्मित तेजी से और बड़े क्षेत्र में फैलती है। जंगल की आग न केवल वन्यजीव (वनस्पति और जीव विविधता को नष्ट कर देती है जिससे प्रजातियों का विलुप्त होना भी हो सकता है, बल्कि भूमि की गुणवत्ता की बदल सकती है। अध्ययन वर्ष २०१९-२०२० में हुई ऑस्ट्रेलिया की झाड़ी की आग को किससे जोड़ते हैं? जलवायु परिवर्तन, जहां हजारों घर नष्ट हो गए और लगभग ३ अरब जानवर मारे गए या विश्थापित हो गए। देश में पिछले ३दशकों में जंगल की आग की संख्या में वृद्धि हुई है और अनुमान है कि नुकसान से उबरने में लगभग २१ साल लगेंगे। दिसंबर, २०२० में पूर्वोत्तर राज्य नागालैंड में जंगल की आग, जो अंततः मणिपुर राज्य में भी फैल गई थी, ने वनस्पति और वन्य जीवन के मामलें में भारी नुकसान देखा। हालांकि आग के सही कारणों का अभी तक पता नहीं चल पाया है, लेकिन विशेषज्ञों का कहना है कि लंबे समय तक जलवायु परिवर्तन के कारण शुष्क मौसम की स्थिति के कारण प्राकृतिक था।

(iv)तापमान में अत्याधिक वृद्धि, बार-बार बाढ़ और सूखे से लेकर बीमारियों में वृद्धि और चुनौतीपूर्ण मानसिक स्वास्थ्य तक जलवायु परिवर्तन पहले से ही स्वास्थ्य क्षेत्र को असंख्य तरीकों से प्रभावित कर रहा है। बदले में सबसे अधिक प्रभावित विकासशील और विकसित देशों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले समाज के लोग है। मलेशिया, डेंगू, हैजा, टाइफाइड और चिकनगुनिया आदि कुछ ऐसी बीमारियाँ हैं जो इन देशों में जलवायु

परिवर्तन के दुष्प्रभावों के कारण बड़ी समस्या पैदा करने के लिए जानी जाती हैं। अत्यधिक गर्मी की घटनाएं विभिन्न प्रकार के हीट स्ट्रेम की स्थिति पैदा कर सकती है जैसे कि हीट क्रैम्प, हीट थकावट और हीट स्ट्रेक।२०३० और २०५० के बीच बुजुर्ग की आबादी में गर्मी के संपर्क में आने से होने वाली मौतों में वृद्धि होने की उम्मीद है।

(v)विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तन का अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव पड़ेगा, लेकिन अर्थव्यवस्था के अधिकांश क्षेत्रों में सकारात्मक प्रभावों की तुलना में दीर्घकालिक नकारात्मक प्रभाव बढ़ेगा। मौसम के बदलते पैटर्न के साथ कृषि उत्पादन का पैटर्न भी प्रभावित होगा और अर्थव्यवस्था में बदलाव का कारण बनेगा। स्विस री इंस्टीट्यूट, स्विटरजरलैंड ने यह भी उल्लेख किया कि आने वाले ३० वर्षों में, दुनिया की अर्थव्यवस्था १८% तक नीचे जा सकती है यदि इस मुद्दे से निपटने के लिए कोई गंभीर उपाय नहीं किया गया। इंडयन एक्सप्रेस में प्रकाशित एक लेख के अनुसार, २०४० में गरीबी में ३.४% की वृद्धि हो सकती है और भारत २१०० तक हर साल ३.५% जीडीपी खो सकता है।

भारत में, जलवायु परिवर्तन के विभिन्न प्रभावों को देखा गया है, जिसमें हाल की गर्मी की लहरें भी शामिल हैं, जो मार्च, २०२२ में उत्तरी और मध्य भारत के कुछ हिस्सों में बताई गई है। मई, २०२२ में भारी प्री-मानसून बारिश असम, सिक्किम, अरूणाचल प्रदेश और मेघालय में भयंकर बाढ़ और भूस्खलन के साथ देश के पूर्वी और पूर्वोत्तर हिस्से में तबाही मचा रही है। वर्तमान बाढ़ के कारण ७ लाख से अधिक लोगों की जान गई है और संपत्ति को भारी नुकसान हुआ है। गर्मी की लहरों की यह शुरूआत और भारती वर्षा जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष प्रभाव के कारण अधिक होने की संभावना है। वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं द्वारा कई जलवायु मॉडल का अध्ययन किया गया है और यह भविष्यवाणी की गई है कि हमारे देश की जलवायु में तेजी से बदलाव कृषि उत्पादन, पारिस्थितिकी तंत्र, खाद्य और जल संसाधनों आदि में बाधा डालेगा।

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ती समस्याओं के साथ, व्यक्तिगत स्तर पर कुछ उपाय अपनाए जा सकते हैं ताकि दीर्घकालिक प्रभावों को कम किया जा सके जैसे, भूजल स्तर को बहाल करने के लिए वर्षा जल संचयन हरित उत्सर्जन को कम करने के लिए नवीकरणीय संसाधनों के उपयोग पर स्विच करना- हाउस गैसें, आगे संरक्षण के लिए ऊर्जा स्रोतों के उपयोग में कमी, कम करने, पुनः उपयोग और पनर्चक्रण के सिद्धांत का पालन करे, जीवन जीने के अधिक टिकाऊ तरीके का पालन करें और पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता में वृद्धि करें ताकि जनता को बेहतर जीवन जीने के लिए शिक्षित और प्रेरित किया जा सके। वैश्विक तापमान और जलवायु परिवर्तन प्रमुख चुनौतियां है जिनका हम आज सामना कर रहे है और इससे निपटने के लिए हमें कठोर नीतियों, स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन और यह महसूस करने की आवश्यकता होगी कि आज हमारे कार्यों के परिणाम भविष्य के लिए गंभीर परिणाम होंगे।

२१वीं सदी की स्त्री-लेखिकाओं की कहानियों में भूमंडलकीकरण का प्रभाव

दीपक कुमार मिश्र

शोधार्थी, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग, मेघालय

भूमंडलीकरण आधुनिकता की देन है जिसने पूरे विश्व को एक ग्राम के रूप में देखता और स्वीकारता है। उद्योगिक विकास, मशीनीकरण, पूंजीवाद-व्यवस्था आदि सभी भूमंडलीकरण की उपज है। जहाँ-जहाँ आर्थिक विकास कर पूंजी का आरोपण हुआ है वहाँ-वहाँ भूमंडलीकरण का गलत तरीके से इस्तेमाल हुआ है और भूमंडलीकरण में पूंजी का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है जिससे व्यक्ति को मशीन बनाने में आसानी होती है समाज और संस्कृति ना चाहते हुए भी भूमंडलीकरण के गिरफ्त में आ रही हैं। स्त्री पर भूमंडलीकरण का सबसे ज्यादा प्रभाव दिखाई पड़ता है क्योंकि उन्हें ग्लोबल चेहरे के रूप में मिस वर्ल्ड,मिस यूनिर्स, मिस अर्थ आदि नए-नए उपाधियों द्वारा सुस्जित कर बाजार को सौंप दिया जाता है और फिर बाजार उन्हें वस्तु के रूप में और शरीर आदि के रूप इस्तेमाल करती है। इन्हीं सभी कारणों से स्त्री को मनोरंजन का साधन बना लिया जाता है। अभय कुमार दुबे भूमंडलीकरण का स्त्री पर प्रभाव से विचलित हो 'पितृसत्ता के नए रूप' नामक आलेख में लिखते हैं- "अमीर देशों में घरेलू काम के लिए और यूरोप के चकला घरों के लिए करोड़ो स्त्रियों को अपराधी गिरोह के जरिए सीमा पर भेजा गया। इस व्यापार में भूमंडलीकृत राष्ट्रों की स्थिति और खुली सहमति शामिल थी।" भूमंडलीकरण ने स्त्री को पावर बूमेन बना दिया उसे अब किसी भी वस्तु रूप में प्रदान कर दिया है। अब स्त्रियाँ आर्थिक रूप से मजबूत हो रही है। अपने पक्ष में निर्णय ले रही हैं और परिवार का भरण पोषण भी करने लगी है। बाजार स्त्री को आर्थिक रूप से मजबूत हो करके स्वतंत्र होने की बात करता है क्योंकि आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर व्यक्ति स्वयं और दूसरों के बारे में सोच सकता है। इसलिए बाजार स्त्री को "भूमंडलीकरण ने औरतों को अतीत के किसी भी कालावधी के मुकाबले अधिक निर्मलता और संपूर्णता से एक बिकाऊ जींस में बदल दिया है। यहाँ औरत का बिकाऊ माल में बदला केवल सौंदर्य उद्योग के संदर्भ में या आमतौर पर बाजार की आलोलचना के एक पुराने मुहावरे के तौर

पर नहीं बताया जा सकता है।" इस भूमेजलीकरण के प्रभाव से आर्थिक रूप से स्त्री मजबूत तो हो रही है साथ ही साथ वह घरेलू हिंसा, शोषण, आदि की शिकार हो रही है। आर्थिक संकट मिटाने के लिए पुरूष वर्ग, स्त्री का व्यापार करते हैं और अपने देश से दूसरे देश स्त्री को शरीरिक धंधा या कार्य करने के लिए हिंसक रूप से उसके साथ दुर्व्यवहार कराते हैं। जिस से तंग होकर वह स्वयं को मौत के घाठ उतार लेती हैं। इस प्रकार भूमंडलीकरण जहाँ उन्हें ग्लोबल चेहरा, पावर बूमेन आदि बना रहा है तो दूसरी और उसके साथ अमानवीय व्यवहार भी हो रहा है।

भूमंडलीकरण के प्रभाव में आकार स्त्रियों ने जाना कि उनके साथ लिंग के आधार पर ज्यादती रही है। समाज में पुरूष को ज्यादा महत्व दिया जाता था और स्त्री को कम। पुत्र जन्म लेते ही खुशियां और मिठाइयां बांटी जाती थी और पुत्री के जन्म पर स्त्रियों को दोषी ठहरा कर सारी गलतियां उन्हीं के ऊपर मढ दिया जाता था। स्त्रियों का अपने अस्तित्व के प्रति जागरूकता और नागरिकता के अधिकार को लेकर तो प्रथम विश्व युद्ध के दौरान ही आंदोलन प्रारंभ हो गया था जब स्त्रियो ने मतदान देने की बात को लेकर आंदोलन किया। फिर उन्होंने ७० के दशक में योनिकिता को लेकर प्रश्न खड़ा करना आरंभ किया। कि क्यों जेंडर आधार पर भेदभाव किया जाता है आदि कई प्रश्नों को उठाकर आंदोलन किया जाता रहा मगर भूमंडलीकरण द्वारा यह दावा किया जाना कि स्त्रियों में जागृति का भाव उनके द्वारा फैलाया गया है तो पिछले कई दशकों से स्त्री मुक्ति संघर्ष जो चल रहा था उसकी उपज कैसे हुई और कहाँ पनपी उसेक संदर्भ में कहा जा

सकता है- "यानी जो काम नारीवादी आंदोलन की पूरी शताब्दी नहीं कर पाई और जो ऐतिहासिक जिम्मेदार समाजवादी क्रांति के उथल-पुथल भरे दशक पूरी नहीं कर पाए वह बाजार ने पिछले १० वर्ष में कर दिखाया। " स्त्री के व्यक्तित्व को दबाकर नहीं रखा जा सकता है। वह भी एक व्यक्ति है ओर इसी रूप में २१ वीं सदी की लेकिकाएँ सामाजिक व्यवस्था को स्थापित करना चाहती है, समाज का मूल बिंदू स्त्री और पुरूष दोनों ही हैं। यदि दोनों को बराबरी का सम्मान ही नहीं प्राप्त हो तो वहां सामाजिक स्थिति डगमगाती सी प्रतीत होती है। समाजवादी दर्शन के अनुसार- "मानव किसी मानवोपरि शक्ति की कठपुतली नहीं है, और न किसी विराट काल का पुरजा ही है। बल्कि मानव उस संसार का, समाज का है जिसमें वह रहता है, स्रष्टा है।" स्त्री को मानव रूप में देखने की बात २१वीं सदी की महिला लेखिका करती हैं। आज किसी भी भाषा की लेखिका अपनी सामाजिक परिस्थितियों से अवगत होकर उस में व्यापत बुराइयों और अच्छाइयों को पाठक या समाज के समक्ष रखने में हिचकिचाती नहीं हैं। कहानीकर और समाज के मध्य संबंधों को उद्घाटित करतेहहुए डॉ. मीनाक्षी पाह्वा लिखती है- "रचनाएँ रचनाकार और समाज के बीच की कड़ी होती हैं और यह कड़ धीर-धीरे रचनात्मकारका दायित्व बन जाती है। यह कड़ी श्रृखलाबद्ध होकर समकालीन कहानी के पाठक को समाज में जोड़ने का काम करती है।" समकालीन स्त्रियों का सामाजिक अवस्थाओं को

महसूस करती हुई, उनमें उठ रहे प्रतिरोधी स्वर को समझते हुये, उसे कहानियों के माध्यम से अभिव्यक्त करती हैं। समकालीन सामाजिक प्रतिरोधी स्वर सर्वप्रथम स्त्री को व्यक्ति रूप में स्वीकार करने की बात पर उठाये जा रहे हैं। पहला मुद्दा यह कि समाज में स्त्री को व्यक्ति नहीं बल्कि वस्तु माना जाता है। दूसरा, पारिवारिक रूप से स्त्री स्थिति बहुत ही दयनीय है। तीसरा, समाज में स्त्री की भूमिका के प्रश्न पर स्त्रियाँ प्रतिरोध करती आ रही है। जैसे- कृष्णा अग्निहोत्री कृत 'अपना-अपना अस्तित्व' कहानी संग्रह की 'झुर्रियों की पीड़ा' नामक कहानी में स्वतंत्र निर्णय लेती हुई स्त्रियाँ कहती हैं- "मोहित मुझे शादी केबाद अपने पिता की देखरेख हेतु पूना ले जाना चाहता था, पर मेरी माँ के अकेलेपन का समाधान एक ही वाक्य से करवा 'शादी के बाद तो ससुराल ही प्रमुख रहता है ना।' मैनें मायका प्रमुख समझा। जीवन की परिभाषा मैने अपने कर्तव्यानुसार चुन ली। जिस माँ ने अपनी जवानी मेरे लिए चुनी तो मैं उनके लिए क्यों न चुनूँ? " स्त्री, गलत का हरवक्त विरोध ही करती है। उसे समाज की सभी परंपराएँ बन्दिशें लगने लगी हैं। वह समाज में बदलाव लाना चहाती है जैसे- 'चन्दरकांता की यादगार कहानियां' के 'ओ सोनकिसरी' नामक कहानी में लेखिका लिखती हैं- "जीजा ने कसे जबड़ो से बात अधबीच ही काटकर कहा था- अभी रितु छोटीहै। जब उसकी शादी का वक्त आएगा तो सोना की आइडियालाँजी और पापा का सोशल रिफार्म हम भी देखेंगे। तुम्हारे विमल भैया समझदार निकले जो समाज-सुधार की भावुकता में न पड़े और पापा के असूलों पर बेटी की जिंदगी बरबाद न होने दी..... बर्बाद! जीजा जी ने बात कही या भाला फेंका? तुम तिलमिला उठी। तुम्हारी आँखों में जलते अंगार दहक उठे। तुमने ज्यादा सहा था, पर पापा के साथ तुम्हारी सहमति थी। कुछ बदलने का विश्वास और दमखम भी। न, गलत के आगे झुकना नहीं है। " आधुनिक स्त्री प्रेम- विवाह को मानती हैं, जहां जाति कोई मायने नहीं रखती। 'चन्द्रकांता की यादगार कहानियां' की 'ना सोहणी ना हीर' कहानी में प्रेम और परिवार के बीज दबी स्त्री दिखाई पड़ती है। जैसे- "बाबा सोच में पड़ गया। लड़का कोन? पूछताछ कराई लो! मिला भी बेटी को तो कौन? " न हसब-नसब, न खानदान, न घर न घाट। .... विमली ने माँ को पिघलाने की व्यर्थ कोशिशे की, "हम रूक सकते हैं माँ, एकाधसाल में उसे कोई न कोई काम मिल जाएगा, न मिलेतो जो मर्जी हो कर लेना, घर से नहीं देश से बाहर कर लेना, मैं नहीं खोलूँगी...." बेटी की 'जबानदराजी' पर माँ गश खाकर गिर पड़ी।" समाज में स्त्रियाँ परचम लहरा रही तो कहीं-कहीं अपना सर्वस्व पति और परिवार को न्योछावर भी कर रही हैं। इसका यथार्थ चित्रण मीरा कांत द्वारा रचित 'गली दुल्हनवाली' कहानी संग्रह की 'स्मृति-पिंड' नामक कहानी में मिलता है। जैसे- "इधर रजनी की पढ़ाई का बहतरीन रिकार्ड देखते हुए और ताऊजी के रसूख से उसे इलाहाबाद के सैशन कोर्ट में स्पेशल मजिस्ट्रेट के पद का न्यौता मिला। रजनी और परिवार की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। पर यह खुशी अधिक न टिक पाई थी। रैना परिवार ने सवाल उठाया था कि जिस कोर्ट में उनका बेटा वकालत करता

है वहीं बहब मजिस्ट्रेट कैसे बन सकती है, चाहे वह पद मानद ही क्यो न हो? सो नौकरी से मुँह मोड़ रजनी ने शादी के बाद अम्मू बनकर अपनी गृस्थी को सँभाला। " स्त्री सर्वप्रथम अपने व्यक्तित्व को उभारना चाहती है, वह व्यक्ति के रूप में समाज में स्थापित होकर स्वतंत्र निर्णय लेना चाहती है, अपनी स्वतंत्र अस्मिता की पहचान करवाना चाहती है, वह किसी और के निर्णय से वर चयन नहीं करना चाहती बल्कि स्वतंत्र रूप से वर का चयन करना चाहती है। इस प्रकार से वह जया जातवानी कृत

'अनकहा आख्यान' कहानी संग्र की 'क्या आपने मुझे देखा है' कहानी में स्वयं को स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में देखती है। जैसे- "न देह, न रूह, किसीको देखर आप अनुमान नहीं लगा सकते कि वह कितनी उजली या मैली है। हम देखते हैं त्वचा या बालों का रंग, आँखों की चमक, चेहरे का ताब और खामोश भाषा, जो कहने-सुनने से परे अपना मायाजाल खुद रचती है। मैं जानती हूँ आफ क्या सोच रहे हैं मेरे बारे में? क्या मुझे कोई फर्क पड़ता है? जिसके सम्बन्धों का इतिहास आपको नहीं मालूम उसके बारे में किया गया कोई भी फैसला एक गलत फैसला होगा। जैसेही मैं उसके सामने बैठी उसने मुस्कुरा कर मुझे देखा... 'प्लीज कम... वेटिंग फोर यू...' मेरी आँखे चौड़ी हो गई... 'तुम मुझे देखते रहे हो...' 'ऑफकोर्स यस। यू आर वेरी ब्यूीफुल।एक जलती हुई लपट है आप, कोई भी भस्म होना चाहेगा। "

समाज में स्त्री सामाजिक समस्याओं से अलग हो स्वतंत्र अस्मिता की खोज करना चाहती है। सामाजिक परंपराओं और रूढ़ियों को तोड़कर नए मूल्य गड़ना चाहती हैं। समाज में स्त्रियाँ अपने पसंद के लड़कों के साथ विवाह करने का प्रस्ताव रखने लगी हैं और दूसरी और पुरूषों से दूर हरकर अकेले जीवन बिताना चाहती हैं। जैसे कि, चंद्रकांता द्वारा रचित 'रात में सागर' कहानी संग्रह की 'पत्थरों के राग' नामक कहानी में चित्रित किया गया है- "सोनलकी सहेलियाँ कहती हैं." अपनी पसंद का लड़का चुनकर सेटल क्यों नहीं होती? सेटल तो हूँ। फिर अब ढूँढू भी तो लड़का नहीं, पूरा मर्द ढूँढना होगा, जो जाहिर है मेरे लिए अभी तक कुँवारा नहीं बैठा होगा। क्या सचमुच इच्छा नहीं होती तुझे अपने एक घर की, एक प्यारे से बच्चे की? मंगला की 'टुटल' मुझसे बेहद हिल गयी है। कोई दोस्त-वोस्त? ऊँह! पुरूष जात से ही एलर्जी है मुझे। समजा में स्त्रियाँ पति के अलावा अन्य पुरूष के साथ भी स्वतंत्र संबंध रखती हैं, जिसको कहानीकार कविता द्वारा रचित 'नदी जो अब भी बहती है....' कहानी संग्रह की 'उस पार की रोशनी' कहानी में वर्तिका और सूरज (पति-पत्नी) के बीच रवि आकर वर्तिका के साथ रहता है और वर्तिका इसको स्वतंत्र रूप से स्वीकारती भी है- "वर्तिका ने अपने हिस्से के सुख में सेंध मारी थी ओर उस पा भी लिया था। अनंत सुख में डूबे हुए। उन दोनों को किसी भी वस्तु का भान नहीं था। वे टूटकर जिए थे और मर भी गए थे। बड़ी ने सुबह के चार बजे का आलार्म बजाया था। वे हड़बड़ाकर एक दूसरे से अलग हुए थे, चाह बज गए? वर्तिका के हाथों अल्बम का वह पन्ना यूं कसा हुआ था जैसे उन क्षणों को अपनी मुट्ठी से आजाद

नहीं करना चाहती" सामाजिक परिस्थितियों और समस्याओं को देखते हुए २१वीं सदी की स्त्रियाँ विवाह जैसे पवित्र रिशते को नकारने लगीं। क्योंकि उन्होंने देखाऔर महसूस किया कि इस समाज में स्त्रियाँ किस प्रकार दहेज के लिए जलाई जा रही हैं एवं घर परिवार में बच्चों के लिए दबाव डाला जाता है। पुरूष किस प्रकार स्त्री को प्रेम के झांसे में डालकर मां बना कर छोड़ देता है और आजीवन स्त्री उस समसाहट में जीती रहती है। ऐसी सामाजिक समस्याओं से स्त्रियाँ दूर भागने लगीं और विवाह को नकार कर अकेले जीवन जीने का फैसला लेने लगीं हैं। नासिरा शर्मा लिखती हैं कि- "अकेलेपन की पुरानी परिभाषा अविवाहित होना है परंतु नई परिभाषा का अर्थ है एक नई जिंदगी की शुरुऊआत। एक नई स्वतंत्रता का ऐलान जिसमें सब कुछ है मगर प्रताड़ना, असुरक्षा, आंसू अविश्वास नहीं है। जो अंजाम है अच्छा या बुरा वह आपका अपना हिस्सा है। क्योंकि उसको आप स्वयं चुना है। यह नई जीवनशैली वर्तमान परिस्थियों में किसको कितनी रास आती है यह भी समय ही तय करेगा।" यह समाज स्त्री को अकेले जीने नहीं दे सकता क्योंकि वह जानता है कि अकेले होने के बाद स्त्रियाँ सारी सत्ता अपने हाथ में ही रखेंगी, जिससे पुरूष सत्ता को ठेस लगेगी, उनका सर्वस्व छिन जाएगा। ऐसी सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ स्त्रियाँ लड़ाई लड़ रही हैं। सामाजिक समस्याओं और स्त्रियों द्वारा उठ रेह प्रतिरोध को २१वीं सदी के महिला कहानीकार हिंदी एवं मैथिली भाषा में कहानियों के माध्यम से व्यक्त करती हैं। विवाह के उरांत पति से प्रेम न मिलने पर स्त्री पति को छोड़ स्वतंत्र रहने का निर्णय करती है। कविता द्वारा रचित 'नदी जो अब भी बहती है....' कहानी संग्रह की 'लौट आना ली' नामक कहानी में सशक्त स्त्री पात्र के माध्यम से चित्रित करती हुई लिखती हैं- "माँ, मैं जा रही हूँ। देव को अब मेरी जरूरत नहीं रही। उसकी अब एक अलग दुनियाँ है. जिसमें मेरी कमी उसे नहीं खलती। देव से मुझे कोई शिकायत नहीं है। उसने कभी भी मुझे कोई शिकायत नहीं की. न हो कोई गलत व्यवहार, पर बर्ताव अच्छा हो कि बुरा, उसे करने के लिए एक खास निकटता की जरूरत तो होती है। वह निकटता, वह घनिष्ठता ही खत्म हो चली थी हमारे बीच माँ। कब, कैसे यह मैं भी नहीं जान पाई और अब जबकि वह लगाव ही नहीं रहा हमारे बीच, महज एक खाना-पूरी की तरह आप सबके बीच बने रहने का मैं कोई मतलब नहीं समझती।" इस प्रकार की सामाजिक व्यवस्था में स्त्री स्वयं की अस्मिता को पहचानकर प्रतिरोध करना प्रारंभ कर चुकी है। ऐसे पात्रों को लेकर २१वीं सदी के हिंदी एवं मैथिली महिला कहानीकार अपनी-अपनी कहानियों के माध्यम से अस्मिता के प्रति सचेत और विरोध करती स्त्री पात्रों को उद्घाटिक करती हैं। स्त्रियों की अस्मिता को स्थापित करती हुई कृष्णा अग्निहोत्री कृत 'गुलगुले' कहानी संग्रह की कहानी 'साहसी हाड़ा रानी' में पति से विरोध करती स्त्री कहती है- "पति को चुप व बेचैन देख रानी ने पति से पूछा- "बाहर सेना आपकी प्रतीक्षा में हैं " आप इतने चुप क्यों बैठे हैं? चुड़ावत ने प्रेम भरे स्वर में कहा-रानी मैं तुम्हें छोड़कर युद्ध में नहीं जा सकूँगा। रानी-ठीक है आप महल में

विश्राम करें, मैं युद्ध भूमि में शत्रु का सामना करने जा रही हूँ। चुड़ावत ने पत्नी की आँखो में शोर्य की ज्वाला को परखा तो उस अपना कर्तब्य बोध हुआ और वह युद्ध के लिए निकल पड़ा।" यह सही है कि २१वीं सदी की महिला कहानीकारों को भूमेडलीकरण समग्रता से प्रभावित करती है। जैसे कि, प्रमुख महिला कहानीकारों की कहानियों की उन्मुक्त नायिका जो स्वतंत्र हो अपने अधिकार और अस्मिता के साथ-साथ लिंग के आधार पर असमानता, समाज में स्त्री को हिन देखने की प्रवृति को, आर्थिक रूप से पुरूष की बराबरी करने की क्षमता, मातृत्व के गुण को त्यागकर आधुनिक और बाजार के अनुकूल व्यवहार करने वाली स्त्री की आर्थिक स्थिति ठीक हो गई है। स्त्रियों में विवाह के प्रति नजरिया बदला है। स्त्री- पुरूष के संबंधों में बिखराव दिखाई देने लगा है। अब स्त्रियाँ स्यंवर ढूंढने का कार्य करने लगी है। बच्चों के पालन पोष्ण और जन्म में भी अंतर देखने को मिलता है।

अंततः कहा जा सकता है कि भूमंडलीकरण एक और स्त्री की उपस्थिति को व्यक्त करता है उसको समाज में इज्जत दिलाने की बात करता है, आर्थिकरूप से बाजार मजबूत करता है। जिससे स्त्री सामाजिक व्यवस्था में स्वयं को शामिल कर पाती है। दूसरी और यही भूमंडलीकरण स्त्री को वस्तु बनाकर दूसरे देशों में निर्यात कर उसे आत्महत्या करने के लिए भी मजबूर करता है। इस प्रकार २१वीं सदी की प्रमुखता महिला कहानीकार की कहानियों में स्त्री पर भूमंडलीकरण का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है।

संदर्भ ग्रंथ-

१. अग्निहोत्री, कृष्णा, अपना-अपना अस्तित्व, नई किताब प्रकाशन, संस्करण- २०१८
२. अग्निहोत्री, कृष्णा, गुलगुले, नम प्रकान, दिल्ली, संस्कारण- २०१४
३. कविता, नदी जो ब भी बहती है...., समसामयिक प्रकाशन, दिल्ली, संस्कारण- २०११
४. कांत, मीरा, गली दुल्हनवाली, समसामयिक प्रकाशन, दिल्ली, संस्कारण-२००९
५. चंद्रकांत, चंद्रकांत की यादगार कहानियाँ, भारत पेपर बैक्स प्रकाशक, दिल्ली, संस्कारण-२०१५
६. चंद्रकांता रात में सागर, रेमाधव पब्लिकेशन्स, गाजियाबाद, संस्कारम-२००९
७. जादवानी, जया. अनकहा आख्यान, सेतु प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण-२०१९
८. दुबे, अभय कुमार (संपादक), भारत का भूमंडलीकरण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, संस्कारण-२००८ई.
९. पाह्वा, डॉ. मीनाक्षी, समकालीन हिंदी कहानी, के.के. पब्लिकेशन, दिल्ली, संस्कारण-२००७
१०. पांडे, रत्नाकर, हिंदी साहित्यः सामाजिक चेतना, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, दिल्ली, संस्कारण-२००७
११. शर्मा, नासिरा, औरत के लिए औरत, समसामयिक प्रकाशन, दिल्ली, संस्कारण- २०१९

---

१४ कविता, नदी जो अभ भी बहती है ....पृष्ठ संख्या-११७-११८

१५ अग्निहोत्री, कृष्णा, गुलगुले, पृष्ठ संख्या-३६

सिक्किम में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी

कृष्ण कुमार साह

हिंदी विभाग, शोधार्थी (पीएच. डी), पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग

भारत एक विशाल देश है। यहाँ अनेक धर्म, रीति-रिवाज और भाषाएँ प्रचलित हैं। इन विविधताओं के बावजूद इनमें अद्भुद एकता दिखाई पड़ती है। भारत प्राचीन काल से ही भाषाओं के माध्यम से एकता के सूत्र में बंधा हुआ हैं। भाषा के संबंध में यह जानना जरूरी है कि यह एक सामाजिक मर्म है और संप्रेषण का अनन्यतम उपकरण होने के साथ-साथ यह हमारी सामाजिक अस्मिता का एक सशक्कत माध्यम भी है। प्रत्येक भाषा एक निश्चित समुदाय के व्यक्तियों को भावना एवं जीवन-दृष्टि के धरातल पर एक दूसरे को नजदीक लाती है और उन्हें आपस में जोड़ती है।

भारत के प्रत्येक राज्य में भाषा के अनुसार व्यवस्था है। कोई प्रदेश एक भाषी है, कोई द्विभाषी और कोई त्रिभाषी, कोई बहुभाषी है। किसी भी देश को संपर्क भाषा के रूप में एक जरूरत पड़ती है। भारत में हिंदी व्यापक स्तर पर बोली, पढ़ी और समझी जाती है। यही कारण है कि आज हिंदी संपूर्ण भारत में संपर्क भाषा के रूप में कार्य कर रही है। संपर्क भाषा कहने से एक ऐसी भाषा प्रतिबिंबित होती है जो दो अलग- अलग भाषा-भाषी के मध्य संपर्क स्थापित करती है। डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया संपर्क भाषा के अर्थ को बताते हुए कहते है- "संपर्क भाषा का तात्पर्य है वह भाषा जो दो भिन्न भाषा-भाषी अथवा एक भाषा को दो भिन्न उपभाषाओं के मध्य अथवा अनेक बोलियाँ बोलने वालों के मध्य संपर्क का माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान किया जाता है।" उदाहरणस्वरूप-

लेप्चा और हिंदी के मध्य = संपर्क भाषा हिंदी

लिंबू और नेपाली के मध्य = संपर्क भाषा हिंदी

हिंदी दो जनजातियों के मध्य = संपर्क भाषा हिंदी

हिंदी प्रदेश की दो उपभाषाएँ ब्रज और भोजपुरी के मध्य = संपर्क भाषा हिंदी

पूर्वोत्तर विविधताओं से परिपूर्ण भारत एक अभिन्न अंग है, जो अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थितियों, जंगलो, बेशुमार पर्वतों, तरह-तरह के वन्यजीवों आदि के कारण पूरे देश का ध्यान आकर्षित करती है, साथ ही यहाँ के निवासियों की विविधता पूर्ण

इन्द्रधनुषी संस्कृती,बोलियों भाषाओं में भिन्नता तथा वेश- भूषा, खान-पान नृत्य-गान और जीवन पद्धति की विविधता बाहरी लोगों को आकर्षित और मोहित करती है। सिक्किम पूर्वोत्तर भारत का एक छोटा राज्य है। जो राजभाषा प्रावधान में 'ग' क्षेत्र के अंतर्गत आता है। सिक्किम में अनेके जातियाँ और उपजातियाँ निवास करती है। भूटिया,लेप्चा, लिम्बू, नेवारी, तामंग, शेरपा, राई सुनुवार आदि प्रमुख जनजातियाँ प्रत्येक जनजातियों की अपनी भाषाएँ एवं अपनी बोलियाँ हैं। इन सभी जनजातिय भाषाओं को सिक्किम में राज्य स्तरीय मान्यता प्राप्त है। सिक्किम में सबसे अधिक नेपाली हैं और यहाँ सबसे अधिक नेपाली भाषा ही बोली जाती है। सबसे अधिक बोली और समझी जाने के कारण नेपाली भाषा सिक्किम में राज्य भाषा के रूप में विराजमान है। "लेप्चा जनजाति की संख्या राज्य में सबसे कम है। नेपाली भाषा संपर्क की भाषा होने के कारण सब इससे परिचित है। नेपाली हिंदी से समानता रखती है और इसकी लिपि भी देवनागरी लिपि है।" सिक्किम में संपर्क भाषा हिंदी के विविध स्वरूप देखे जा सकते हैं-

१. अंतर वैक्तिक संप्रेषण (पस्पर बातचीत)

२. जन संचार

३. प्रशासन

४. शिक्षा

५. आर्थिक गतिविधि

सिक्किम में पस्पर बातचीत के लिए संपर्क भाषा हिंदी एवं नेपाली प्रयोग की जाती है। यहाँ मूल निवासियों के अलावा अन्य राज्यों के लोगों की संख्या भी प्रयाप्त मात्रा में है। नौकरी, व्यापार, सेना एवं अनेक कारणों से देश के विभिन्न प्रान्तों से आकर यहाँ निवास करने वाले लोगों ने हिंदी भाषा के प्रचार- प्रसार में अभूतपूर्व योगदान दिया है। असम, अरूणाचल प्रदेश, बिहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश आदि के बहुत सारे लोग यहाँ काम एवं व्यापार करते हैं। स्थानीय लोगों से इतर ये लोग सिक्किम की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक उन्नति में अपना योगदान दे रहे हैं। ग्रामीण इलाकों में यहाँ के जनजाति आपसी बातचीत के लिए मातृभाषा का प्रयोग करते हैं, परंतु जब दो भिन्न जनजातियाँ आपस में बातचीत करती है तब वे संपर्क भाषा के रूप में हिंदी और नेपाली का उपयोग करते हैं। शहरी क्षेत्रों में नेपाली और हिंदी ही संपर्क भाषा के रूप में प्रचलित है। जन-संचार माध्यमों ने सिक्किम में जन-जन तक हिंदी के विकास में अहम भूमिका निभाई है। टेलीविजन, प्रिंटमिडिया, इलेक्ट्रनिक सोशल मीडिया,इंटरनेट आदि माध्यमों ने सिक्किम में जन-जन तक हिंदी पहुँचाने का कार्य किया। सिक्किम में हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में स्थापित करने में फिल्मों का बड़ा योगदान रहा है। आकाशवाणी और दूरदर्शन ने यहाँ हिंदी के प्रचार-प्रसार में अभूतपूर्व सहयोग किया है। इनके कार्यक्रमों के माध्य से हिंदी की लोकप्रियता में निरंतर वृद्धि हुई है। हिंदी फिल्मों और हिंदी गीतों ने भी इस क्षेत्र में हिंदी की लोक लोकप्रियता में वृद्धि की है। यहाँ के अधिकतर लोग हिंदी फिल्में देखते हैं। यहाँ के 'लेप्चा' मजदूर कार्य करते हुए हिंदी गीत सुनते नजर आते हैं

तो कहीँ 'भूटिया' टेक्सी चालक हिंदी गीत बजाते हुए मिल जाते हैं। डॉ. एम. होरम अपनी पुस्तक 'सोशियल एण्ड कल्चर लाइफ ऑफ नागाज' नामक पुस्तक में पूर्वोत्तर में हिंदी भाषा के प्रसार का श्रेय भारतीय सिनेमा को देते हुए कहते हैं- "संभवतः भारतीय सिनेमा उद्योग वह एक मात्र प्रमुख साधन है, जिसको भारत के अन्य भागों की प्रथाओं से इन पर्वतीय जनों को परिचित कराने तथा उनमें हिंदी प्रसार का निश्चित रूप से प्रमुख स्रोत होने का श्रेय दिया जा सकात है। वास्तव में तांखुल नागा ही नहीं, वे सभी उत्तर-पूर्वी भारतीय जनजातियों में संगीत-गान में श्रेष्ठ एवं विशिष्ठ हैं और संगीत की लय को पकड़ने की उनमें अद्भुत क्षमता है।"

विविध प्रशासनिक केन्द्रों के कार्यालयों में हिंदी में कार्य करने का प्रावधान है। ये कार्यालय हिंदी में कार्य करने हेतु प्रयासरत हैं और समय-समय पर विविध कार्यक्रम का आयोजन भी करते हैं। जिससे संपर्क हिंदी और अधिक विकसित हो रही हैं। सिक्किम में हिंदी के प्रचार- प्रसार के लिए केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा विशेष कार्य कर रहा है। संस्थान द्वारा १०से १५ दिनों के शिविर का आयोजन कर प्राध्यापकों को हिंदी प्रशिक्षण दिया जाता है। जिसमें हिंदी की मूलभूत शिक्षा दी जाती है। जिससे शिक्षक हिंदी का प्रयोग अपने शिक्षण में करें।

सिक्किम में प्राथमिक शिक्षा से लेकर कक्षा आठ तक हिंदी अनिवार्य रूप में पढ़ाई जाती है। विद्यालयों में कक्षा आठ से बारहवीं तक वैकल्पिक विषय के रूप में हिंदी की शिक्षा दी जाती है। संस्कृत महाविद्यालय, सादोंग पूर्व सिक्किम, में हिंदी मुख्य विषय के रूप में कई वर्षों से पढ़ायी जा रही है। नरबहादुर भंडरी महाविद्यालय में हिंदी प्रशिक्षण का प्रावधान इस वर्ष से ही शुरू हुआ है। यहाँ हिंदी के विकास में सिक्किम केंद्रीय विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग का विशेष योगदान रहा है। सिक्किम विश्वविद्यालय में २०१३ ई. में हिंदी में प्रशिक्षण की शुरूआत हुई है। जिससे यहाँ के स्थानीय लोगों में हिंदी-पढ़ने की रूचि बढ़ी है। इस वर्ष २०२२ से ही सिक्किम विश्वविद्यालय में हिंदी स्नातक की भी शुरूआत हुई है। इससे पूर्व से ही यहाँ हिंदी में स्नातकोत्तर की पढ़ाई के साथ शोध-कार्य भी संपन्न हो रहे हैं।

सिक्किम में नेपाली और हिंदी दोनों ही संपर्क भाषा के रूप में समान रूप से कार्य कर रही है। सिक्किम में हिंदी साहित्य में सृजनात्मक कार्य कम हुए हैं और नेपाली भाषा में प्रचुर साहित्य की रचना हुई है। वर्तमान में अनुवाद के क्षेत्र में विशेष ध्यान दिया जा रहा है परंतु हिंदी के मौलिक लेखकों की संख्या बहुत कम हैं। हिंदी लेखकों में सुवास दीपक वीरभद्र कार्की ढोली,पद्म छेत्री आदि का नाम प्रमुखता से लिया जाता है।

हिमालय की गोद में स्थिति सिक्किम राज्य प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर है। इस मनोरम सुंदरता को देखने के लिए प्रत्येक वर्ष यहाँ लाखों पर्यटक आते हैं। यहाँ की अर्थव्यवस्था पर्यटन पर काफी निर्भर है। पर्यटकों और सिक्कम के लोगों को आपस में जोड़ने में हिंदी संपर्क भाषा के रूप में महत्वपूर्ण योगदान देती है। नेपाली एवं हिंदी में

तालमेल होने एवं पर्यटन स्थल होने के कारण हिंदी संपर्क भाषा के रूप में वर्ग प्रत्येक वर्ग में जनप्रिय है।

हिंदी एक सशक्त संपर्क भाषा है जिसके प्रयोग से राष्ट्रीय एकता की भावना प्रबल होती है। अंततः कहा जा सकता है कि सिक्किम में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का काफी विकास हुआ है। परंतु हिंदी प्रचार-प्रसार के लिए संस्थाओं की कमी पर सरकार को ध्यान देना चाहिए। यहां हिंदी इतनी विकसित होने के बाद भी इसमें साहित्य लेखन का कार्य बहुत कम हुआ है, इसकी पड़ताल कर समस्याओं का समाधान खोजना चाहिए जिससे हिंदी इस क्षेत्र में और अधिक विकसित हो। महाविद्यालयों में भी हिंदी की व्यवस्थित शिक्षा उसके ढंग से नहीं दी जा रही है। जिसकी आवश्यकता है। हिंदी भाषी लोगों को भी यहाँ की भाषाएँ सीखनी चाहिए जिससे आपसी मैत्री भाव बढें। विनोबाभावे ने कहा था- "जैसे इनद्रधनुष में भिन्न-भिन्न रंग होते हैं वैसे ही हिंदुस्तान में भिन्न- भिन्न भाषाएँ हैं। भारत के लोगों को दो-तीन भाषाओं का ज्ञान होना ही चाहिए। इससे खूब ज्ञान मिलेगा, बुद्धि व्यापक होगी, एक दूसरे की भाषा सीखने से प्रेम बढ़ेगा,व्यवहार सुगम होगा और हिंदुस्तान की ताकत बढ़ेगी।" अतः जैसे- जैसे हिंदीतर भाषा-भाषी राज्य संपर्क भाषा के रूप में हिंदी को मान्यता देते जाएँगे वैसे-वेसे हिंदी अधिक समृद्ध और संपन्न होती जाएगी।

संदर्भः

१. हिंदी भाषा, डॉ. कैलाश चन्द्र भाटिया,पृ.- ११८

२. लैंग्वेज एंड लिटरेचर, लैंड एंड पीपल ऑफ इंडियन स्टेट्स एंड यूनियन टेरिटरीज, एस.सी. भट्ट (संपा.) अंक- ४,२००१, पृ. ७१

३. डॉ. एम. होरम, सोशियल एंड कल्चर लाइफ ऑफ नागाज, पृ.- १०५

४. हिंदी भाषा, कैलाश चन्द्र भाटिया, पृ.- १२०

तांग्सा आदिवासी समुदाय के परिप्रेक्ष्य में पर्व- त्यौहार और लोक साहित्य

रेमोन लोंगकु

परिचय

अरूणाचल प्रदेश पूर्वोत्तर भारत का एक ऐसा राज्य है जहाँ विभिन्न समुदाय और उपसमुदाय रहते है। यह राज्य विभिन्न भाषाएँ एवं संस्कृति के दृष्टि से समृद्ध है। इस राज्य में मुख्यतः मंगोल नस्सल के आदिवासी निवास करते है। अरूणाचल प्रदेश में २६ आदिवासी समुदाय और १०० से अधिक उपसमुदाय है। 'तांग्सा' आदिवासी समुदाय अरूणाचल प्रदेश के चांगलांग जिले के मूल निवासी है। यह समुदाय केवल इसी एक क्षेत्र में निवास करते है। चांगलांग जिला बर्मा पर्वत के सीमांत और असम राज्य के सीमांत के बीच है। तांग्सा मंगोल नस्ल के लोग है जो बर्मा से १३वीं शताब्दी के आसपास से ही मौजूद क्षेत्र में निवास करने लगे थे। चांगलांग जिला चार उपभागों में विभक्त है जैसे मिआओ, जैराम्पुर, बोर्दुम्सा, चांगलांग तथा इन चारों में तांग्सा आदिवासी समुदाय निवास करते है। 'तांग्सा' शब्द का अर्थ है 'तांग' यानि 'उच्च भूमि' और 'सा' यानी 'पुत्र' अर्थात 'उच्च भूमि के निवासी' या 'लोग'। इस समुदाय के अंतर्गत लोंग्चांग, मोक्लोम, मोसांग, तिखाक, किम्सिंग, पौथाई, जुगली, लुन्गरी, मुन्ग्रे, रेरा, ओनी चफांग, थफांग, सैकी, चोलिम, तोंलोम, जोंगी, वक्का, गैलून, लोंयुंग, हचेंग, हखुन, हवोई, खलक, लक्कई, लामा, लांचिंग, लुन्फी, लुन्खी, जाईमोंग, शांग्री, शान्वाल, आदि है। तकरीबन ७० अपसमूह की पहचान की गई है तांग्सा के अंतर्गत। किन्तु इनमें से कुछ बर्मा में है, तो कुछ भारत के चांगलांग जिला में। तांग्सा समुदाय के लोग अधितर खेती करते हैं। इस समुदाय के लोग कुछ रान्फ्रह, कुछ इसाई, कुछ बौद्ध, तो कुछ सनातन धर्मा को मानते हैं। खान-पान में वे चावल, कच्चू, घुईयाँ, मुलायम बांस की सब्जी, कचालू, जंगली साख, मांस आदि खाना ज्यादा पसंद करते है। उनके घर अधिकतर बाँस से बने हुये होते हैं। और छत टोको पत्ते से बनी होती है।

पर्व-त्यौहार

तांग्सा समुदाय में दो सबसे मुख्य पर्व-त्यौहार मनाए जाते है 'मोह्मोल' और 'हारोंग'।

'मोह्मोल' का अर्थ है 'त्यौहार' और 'हारोंग' का अर्थ है 'भूमि को समृद्ध करना'। मोह्मोल त्यौहार कृषि जीवन से संबंधित है, जो खेत की फसल को समृद्ध और अनुकूल बनाने के लिए अपने पुरखों को स्मरण करते हैं। अर्थात खेत की फसलों के अनुकूल उपलब्धि के लिए पुरखो का निवेदन और स्मरण करते हुए फसलों को पहले उन्हें समर्पित करते हैं। इस त्यौहार में तांग्सा समुदाय के लोग वाद्य यन्त्र बजाते हुए लोक नृत्य करते है और लोक गीत गाते है। इस त्यौहार में स्त्रियाँ पारम्पारिक वेश-भूषा में कपड़े को स्त्रियाँ खुद कमर से घुटने तक चारों और से लपेटा हुआ पहनती है जिसे 'खट्टा' कहते है। इस कपड़े को स्त्रियाँ खुद अपने हाथों से बुनती हैं। छाती पर कालेरंग के ब्लाउज जैसी आकृति को पहनती है जिसे 'पीपा दोहोंग' कहते है। साथ ही स्त्रियाँ मोती की लाल, पीले रंग की माला और सिक्को की माला गले में लगाते है। साथ ही सिर पर धनेश पंख या साही कॉटे को भी बालों में सजाते है। पुरूष एक कपड़े का टुकड़ा अपने लिंग को ढके लेंगती जैसी आकृति में पहनता है जिसे तांग्सा में 'लैसम' कहते ये 'लैसम' कपड़े भी स्त्रियाँ खुद बुनते है उनके लिए। साथ ही पुरूष सिर पर बाँस से बनी मुकुट जैसी आकृती में लगाते है जिसमें धनेश पंख से सजा हुआ होता है। वे छाती पर कपड़े नहीं पहनते, केवल मोती या सिक्कों की माला गले में लगा लेते है। त्यौहार के दिन पुरूषों के कंधे में ढोल लटकाए हुए होते है जो बहुत ही आनंद के साथ बजाते हुए नृत्य करते है जिसे 'नोंग' कहते है। स्त्रियाँ थाल जैसी आकृति को हाथ में लिए बजाते है जिसे 'याम' या 'जाम' भी कहते है और नृत्य करते है। साथ ही बुजुर्ग लोग भी लोक गीत गाते हुए नृत्य करते है। घर-घर मैं शाम को त्यौहार के दिन घर की पूजा की जाती है जिसे 'रोमरोम' कहते है। इस पूजा में अपने-अपने पुरखों को स्मरण करते हुए उन्हें मांस, चावल से बनी मदिरा, धान, अदरक को एक जंगली पते में बांधकर उन्हें समर्पित करते है। उनका मानना है कि यह पुरखों की ही देन है और उन्हें ही सबसे पहले दिया जाए। उस त्यौहार के दिन तांग्सा आदिवासी लोग अपने-अपने खेतों में भी जाते है, जहाँ खेती की पूजा की जाती है। इस पूजा को 'पकरोम' कहते है। शाम होते ही तीन-चार दिन तक बिना सोए घर-घर में घुम-घुम कर ढोल बजाते हुए नृत्य करते है और लोकगीत गाते है।

'हारोंग' एक भूमि पूजा का त्यौहार है जिसमें मुर्गा, भैंस, , सुअर को काटकर भूमि को अपने पुरखे मानते हुए उसे समर्पित करते है। इस त्यौहार में गाँव में प्रवेश करने के मार्ग के सामने एक छोटा सा बाँस का घर बनाया जाता है, जिसमें मांस-मदिरा बनाई जाती है। 'हारोंग' स्थान को 'पारोंग थोंग' भी कहते है। 'हारोंग' के दिन उस स्थान पर केवल पुरूषों को जाने की अनुमति है स्त्रियाँ को नहीं। उस स्थान में पुरूष लोग लोकगीत गाते है और नृत्य भी करते है। फिर वे मांस- मंदिरा खाने-पीने के बाद शाम होते ही वहाँ से एक लम्बी बाँस को पुरूष लोग अपने कंधे के दाए और उठाता है और सभी लोग क्रम से साथ एक मुख्य के घर चल देते है। जहाँ सभी गाँव वाले बच्चे,स्त्रियाँ, पुरूष वहाँ इक्ट्ठा होकर मांस-मदिरा जलपान करते है। इस त्यौहार में भी गाँव वालो को

निश्चित रूप से पारम्पारिक वेश भूषा पहनना होता है। अन्यथा उनका मानना है कि पुरखे नाराज हो जाते है। स्पष्ट शब्दों में कहा जा सकता है कि 'हारोंग' एक भूमि पूजा का उत्सव है जिसे पुरखे पूजा भी कहा जा सकता है। तांग्सा आदिवासी समाज का मानना है कि उनका जन्म भूमि से हुआ है और उनकी आत्मा भी उसी भूमि में मिल जाती है जिसे वे 'जा' अर्थात 'पुरखा' कहते है।

लोक साहित्य

तांग्सा आदिवासी समुदाय में लोक साहित्य की पंरपरा बहुत ही प्राचीन है। भले ही इस समुदाय में भाषा की लिपि नहीं है। किन्तु लोकगीत, लोककथा, लोकसुभाषित और लोकनृत्य को आज भी बरकरार रखने में सक्षम है। इस समुदाय में लोकनाट्य और लोकगाथा की परंपरा नहीं गोती। तांग्सा लोकगीतों में पूजा, प्रे, मनोरंजन, त्यौहार, लोरी, प्रकृति, विवाह, शो, आदि से संबंधित पाए जाते है। पूजा से संबंधित लोकगीत कुछ इस प्रकार है- नंग्तई मोह लो... नंग वा मोह लो... ओ जा हई... औ जा हई... शब्दार्थ है नंग्तई मोह लो' हमारे परदादा का त्यौहार है, 'नंग वा मोह लो' हमारे पिता का त्यौहार है, 'ओ जा हई...' ओ हमारे पुरखों... ओ हमारे पुरखों। तांग्सा समुदाय त्यौहारों में इस गीत को घर की पूजा, खेत की पूजा, भूमि की पूजा में एक प्रचलित और अनिवार्य रूप से गाते है। भावार्थ यह है की वे पुरखों को इस के माध्यम से स्मरण करेत हुए कहते हे कि आपकी परंपरा को, संस्कृति को, कभी नहीं भूलेंगे। प्रकृति से संबंधित लोकगीत को भी कुछ इस प्रकार से देखा जा सकता है- "रंग्सई ले कांग-कांग... मनमई ले दांग-दांग...."। रंग्सई ले कांग-कांग शब्दार्थ है- 'हे सूर्य तुम अपने ताप को बढ़ाओ'। 'मनमई ले दांग-दांग' अर्थात 'जो बादल तुम्हें अपनी काली छांव से ढक रहा है उसे अपनी तेज ताप से हटा दो'। यह लोकगीत ज्यादातर तब गाए जाते है जब बादलों से सूर्य की किरण को रोक देते हैं और कुछ लोगों को सूर्य की किरणों की आवश्यक सा प्रतीत होता है। हालांकि इस लोकगीत को अधिकतर बच्चे गाते है। जब वे झरने या नदियों में नहा रहे होते है और वे ठंड से कपकपा रहे होते हैं। जिसमें वे सूर्य प्रकृति को इस गीत के माध्यम से बुलाते है ताकि वे ठंड से बच सके।

इस तरह तांग्सा आदिवासी समाज में लोककथा कहने की कला और परंपरा आज भी मिलता है। यह कला अधिकतर गाँव-गाँव में बुजुर्गो के माध्यम से मौखिक रूप से सुनने को मिलते है। गाँव में जब नौजवान और बच्चे बुजुर्गों के साथ इकठ्ठा होते है, तब वे बुजुर्ग बड़े ही उत्सुकता और भावकुता के साथ सुनाते है। इस समुदाय की लोककथाओं में विभिन्न स्वरूप दिखते हैं जैसे- उत्पतिपरक लोककथाएँ, मनोरंजन से संबंधित लोककथाएं, प्रकृति से संबंधित लोककथाएँ, इतिहास से संबंधित लोककथाएँ, उपदेशात्मक लोककथाएँ, पारलौकिक लोककथाएँ, कृषि जीवन से संबंधित लोककथाएँ, प्रेम पर आधारित लोककथाएँ, नैतिक शिक्षा पर आधारित लोककथाएँ, लोक कला से संबंधित लोककथाएँ, विवाह से संबंधित लोककथाएँ, जन्म संस्कार से संबंधित

लोककथाएँ, लोक आस्था से संबंधितलोक कथाएँ, दंपति जीवन से संबंधित लोककथाएँ, वेश-भूषा और खान-पान से संबंधित लोककथाएँ, मृत्यु संस्कार से संबंधित लोककथाएँ, भाषा से संबंधित लोककथाएँ आदि। तांग्सा लोककथाएँ है- नो ना लोक (भाई का कटा हुआ कान), रिजुम हा (रिजुम पहाड़), दोंग्पोंग नि आ फान्थोई (दोंग्पोंगऔर फान्थोई, खम्म (मदिरा), वक नि आ ही (सुअर और कुत्ता), नासम-नादम (एक कान से ओढ़ना, एक कान से बिछाना), सावट (जोंक), वी नि आ मीड़ (बन्दर और इंसान), सोंग्फिन नि आ मीड़ (लिटलिपुट बौना और इंसान), सोंग्फि (लिलिपुट बौना), पोते (केंचुआ), कोंग्कोंग– फान्फांग अमन फन (साथ-साथ और अलग-अलग की कहानी), हुयी नि के (कुत्ता और बकरी), सपवा (भालू), हिजान (सियाल), रान्जाला (आसमान की लड़की), यांवोखु (चरंग मछली), देंगरू मन फन (इल्ली की कथा), वौंखा नि आ चोक (कौंवा और हिरण), साफो नि मंफन (दो भईयों की कथा), रान्गफ्राह (रान्फ्राह की कथा), तान्सा रूकरी मंपन (तांग्सा भाषा की कथा) आदि उदाहरण हैं। इन लोककथाओं में प्रेम, प्रकृति, समाज, दर्शन, मनोरंजन, नैतिक शिक्षा आदि स्वर प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए 'वोखा नि आ चौक' (कौंवा और) अक सच्ची मित्रता पर आधारित लोककथा हैं जिसमें कौंवा हिरण को सियाल से बचाता है। कही न कही यह कथा समाज को नैतिक दृष्टि से सन्देश देता है कि अपने घनिष्ट मित्र की बात हमें अवश्य सुनना चाहिए और उसकी मदद हमें जरूर करनी चाहिए। नहीं तो एक दिन खुद को ही हानि पहुँचती है।

तांग्सा लोकनृत्य को दो रूपों में देखा जा सकता है एक जो ढोल बजाते हुए नृत्य करते है, दूसरा गीत गाते हुए नृत्य करते हैं। ढोल के साथ जो नृत्य करते है उसमें लोग उछल-उछल कर नृत्य करते है। इसमें पैरों का उपयोग अधिक होता है और उत्तेजित के साथ पैरों का कदम लेते है। इस नृत्य में एक पुरूष एक बड़ा सा ढोल कंधे पर लटकाए और बजाते हुए आगे-आगे तेजी से पैरों को उछालते चलते है। फिर उनके पीछे-पीछे बाकी लोग भी ढोल और थाल बजाए अनुसरण करते हैं। गीतों के माध्यम से जो नृत्य किया जाता है वह नृत्य तेज या उछल-कूद नहीं होता है। इसमें सभी लोग एक समूह बनाते हैं एक चक्र की आकृति में। फिर धीरे-धीरे पैरों को जमीन में थपथपाकर उसी जगह परिक्रमा करते हुए झूमते है। इसमें गीत गाने वाले बुजुर्ग लोग होते है और कुछ नौजवान भी। इस नृत्य में ढोल या थाल की ध्वनि का प्रयोग नहीं होता केवल गाकर ही नृत्य किया जाता है। इस नृत्य में हरेक व्यक्ति के हाथ अपने ही दो हाथ को पीछे की ओर जकड़े होते है और पैरों से छोट-छोटे कदम लेते हुए झूमते हैं।

लोक सुभाषित

तांग्सा समुदाय के लोक सुभाषित में मुहावरे, कहावते, लोकोक्तियाँ के रूप में देखने को मिलता हैं। तांग्सा लोक सुभाषित के प्रयोग में व्यंग्यात्मक, उदेश्यात्मक, रहस्यात्मक आदि रूप से मौजूद हैं। इस लोक सुभाषित में लय और तुक का प्रयोग बहुत कम मात्रा

में देखा जाता है।

१. मुहावराः उदाहरण है तांग्सा मुहावरा में- "नत फनांग"

शब्दार्थः नत- दबा देना या चैप देना

फनांग- कर दूंगा या दूँगी

भावार्थः यहाँ 'नत' शब्द मारने या पीटने का व्यंग्य प्रतिक है। 'फनांग' कर दूंगा या दूँगी। जब किसी पर गुस्से में आकर मारने की धमकी देता है। तब 'नत फनांग' मुहावरे रूप से शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जबकि 'नत का अर्थ' दबाना है. जो पीटने का एक व्यंग्य प्रतिक है।

एक और उदाहरण है- "संग.... तियु"

शब्दार्थः संग- लाल या फूल जाना

तियू- होना

भावार्थः 'संग तियु' का मुहावरा अर्थ है गुस्से में लाल, शर्म से लाल या फूल जाना।

जब किसी को चिढ़ाते है या व्यंग्य करते है। तभी इस मुहावरा शब्द का प्रयोग किया जाता है।

२. पहेलियाः तांग्सा पहेलिया में उदाहरण है- "जुंग ना ताक लप, हा ना ताक थप"

शब्दार्थ जुंग-पानी, ना में ताक-साँस, मिलना या पाना, हा- मिट्टी, ना- में, टाक-साँस, थप साँस रूकना

भावार्थः पानी में साँस मिलता है और जमीन में साँस रूक जाती है। इसका अर्थ होता है 'मछली'। मछली पानी में साँस लेती है लेकिन जमीन में साँस रूक जाती है।

एक और पहेलिया है- "वात ओ थो टाक मो, चुट ओ थो थजुत मोह"

शब्दार्थः वात ओ थो- मारने पर भी, टाक मो- दर्द नहीं होता, जुट ओ थो- काटने पर भी, थजुत मोह- नहीं कटता

भावार्थः यहाँ पहेलिया सुलझाने के लिए प्रश्न दिया जाता है कि मारने या पीटने पर भी जिसे दर्द नहीं होता और दांव से काटने पर भी कटता नहीं। इसका उत्तर 'पानी' होता है। पानी न कटता है और न ही उसे दर्द होता है क्यूँकि वह अजीव है।

३. लोकोक्ति (कहावतें) ः तांग्सा लोकोक्ति के उदाहरण है- "निजा सम-सम, निजा लम-लम"

शब्दार्थः निजा-खुद, सम सम-जानना, लम-लम- रास्ता

भावार्थः निजा 'सम-सम' हमेशा अपने से काम रखना चाहिए, 'निजा लम-लम' दूसरों के रास्ते में टांग नहीं अड़ाना चाहिए।

कहा जाता है कि दूसरों के रास्ते में टांग नहीं अड़ाना चाहिए नहीं तो खुद के लिए मुसीबत बन जाती है। इसीलिए हमेशा अपने काम से काम रखना चाहिए।

एक और उदाहरण है- "जाक वांग थेई....हआ न खेई... हुम्चुकुंग न के"

शब्दार्थः 'जाक वांग थेई' से तात्पर्य है कि अपने हाथ से तोड़ना, अपने हाथों से खूब महनत करना। 'हआ न खेई' भूमि में बौना। 'हुम्चुकुंग ना के' तभी अपने घर में बकरी जो एक लक्ष्मी का प्रतिक है वह प्राप्त होती।

कहावत है कि हमें दूसरों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। अपने आप महनत करना चाहिए तभी घर में धन की प्राप्ति होती है।

निष्कर्षः इस प्रकार देखा जा सकता है कि तांग्सा आदिवासी समुदाय में पर्व-त्यौहार में पुरखे और प्रकृति को पूजते है। साथ ही उनके स्मरण में नाचते, गाते और वाद्य यन्त्र बजाते हैं। लोक साहित्य की विधा को अगर हम देखते हैं तो आज भी गाँव-गाँव में तांगस् लोकगीत, लोकनृत्य, लोककथा और लोक सुभाषित प्रचलित हैं। किन्तु बढ़ते आधुनिक युग में यह कला परंपरा कही न कही विलुप्त होता हुई भी दिखाई दे रही है। तांग्स समुदाय की लोकसाहित और संस्कृत को एक पुस्तक का रूप देना एक आवश्यक सा है।

काव्य खंड

प्रकृति रोती है

प्रो. स्ट्रमंलर डखार

केवल तुमपे मोहित हुई
आदर्श स्वरूप पुरूषों के मध्य में से,
आपने साथ देने का वचन दिया
हर्ष हो या विषाद ;
मैं स्वास लेती हूँ
प्रकृति की स्वच्छ वायु की
आप भी उसी से लेते हैं
उसकी स्वच्छता का साक्षी बनने के लिए।
अपनी भूमि के चहुँ ओर टिके हो
आप अमूल्य निधि हो,
अप खासी भूमी की शान हो
विदेशी भी गुणगान करते तेरी ;
घने और पावन वनों में
महान व्यक्तित्व लिए हुए
प्रकृति माँ का तू पुत्र है
पुरूषार्थ का पुत्र है ;
दूसरे भी आप पर मोहित हैं
जैसे मैं तुमसे प्रेम करती हूँ
एक पल के लिए कथा बयान करती हूँ,
तुम्हारी शक्तिव अलौकिक प्रतिभा की
संसार मात्र तेरा गुणगान करता है ;
तुम्हारा नाम कहाँ लुप्त हुआ ?
परदेशी के हाथों बेच दिया गया।
तुम्हें रोकने का सामर्थ्य नहीं मुझमें
यद्यपित तुम्हीं से अगाथ प्रेम करती हूँ
क्योंकि एक और महा शक्ति
तीव्रता से चोट मारती है।
तुम समय के पहिए में लुप्त हुए
क्योंकि उन्होंने तेरा मान न रखा
और क्योंकि मोल ठीक था ;
तेरी परिपक्वता को उतारा गया
तुम्हारे अधिकार को उन्होंने कुचला !
प्रकृति रोती है, उसका दिल टूटता है,
व्याकुल हो वह बिलखती है
क्योंकि उसका अस्तित्व मिटाया गया है
अपनों द्वारा किसी गैर से नहीं
हाथ रे देशद्रोही !
मूल पहचान को जड़ से उखाड़
रूपयों के लिए रूपयों के लिए
दुष्ट ह्रदय को उकसाया !
अब तुझे कैसे निहार पाऊँगी ?
तेरी खोज पूरे देश में मैंने की
तेरे उस स्वरूप से मैं वंचित हुई
चहुँ ओर केवल तेरी आत्मा का आभास है
जब भई पंखेरूप पत्ते झलते हैं।
प्रकृति मेंरे साथ रोती है
क्योंकि अपना पुत्र उसने वास्तव में खोया है
घने विपिन जब उजड़ गए है
रिन्याव पंछी अब छाँवसे वंचित हुआ
लिङडैम भी शांति से रहित हुई।

अब तुम्हें कदापि न देख पाउँगी।
मन दुखता है अश्रु बहते हैं
एकांत में ह्रदय चुभता है
चब तुम्हे खो देती हूँ 'चीड़'।
है चीड़! बिना दया के
तुझे उड़ाया गया है किधर?
संसार के उस पार तू नीलाम हुआ
केवल वे यादें
तुम्हारे साथी मेरी तहर बिलखते हैं
अब तुम गुलाम बनने निकले हो
क्योंकि तुझे सदा के लिए बेचा गया है
अपनी जन्मभूमि से कहीं दूर।
खासी विभाग, नेहू

...क्या बात थी

उमा शंकर

अमृत कलश की एक
बूँद की आस थी
अपने ही अश्रु पी गए
इतनी प्यास थी

भाग करके बरसों भी
न भागी बन सके हम
क्योंकि हमारी शिरकत
न उनको रास थी

अपने हुए पराये
कुछ पलों में दोस्त
ये सोच सोच करके
जन जन निराश थी

खान पान मान मिला
उनको जो थे महान
जनमानस से ज्यादा जिनकी
शख्सियत खास थी

हिम्मत से हमने एक कलश
घर में बना लिया
स्वेद भर लबालब
पी गए, क्या बात थी

क्या बात थी, क्या बात थी.

इस मोड़ से जो लौटना चाहते हैं, लौट जाएँ

विहाग वैभव

इस मोड़ से जो लौटना चाहते हैं, लौट जाएँ
यहाँ से आगे
अतिरिक्त नींद के स्वप्न में तितली का अमलतास को न चूम पाने का कपासी दुख नहीं होना हैं
यहाँ से आगे
महुआ के गंध से देस के विस्थापन का घाव लेना नामुकिन होगा
यहाँ से आगे
ठुमरी पर बजता पखावज सदियों दूर से आती मानुष-चीख में बदल जाएगा
यहाँ से आगे
कत्थक करते कमल-दल से पाँव मानुष-लोहू में डूबने लगते हैं
इस मोड़ से जो लौटना चाहते हैं, लौट जाएँ
यहाँ से आगे
घृणा की आग में जली बस्तियाँ आएंगी
मध्यकालीन मर्द के मस्तिष्क के मवाद से मरी बच्चियाँ आएंगी
परिवार के कोल्हू में कच्ची तीसी सी पेर दी गई स्त्रियाँ आएंगी
बीमार मनुष्यता के लिए जंगल से सन्नाटे की औषधि बटोरते हुए पहाड़ो में जिंदा दफनाए गए मुण्डा और टोप्पो आएंगे
अवर्णों की हड्डियाँ उनके लहू में घिसकर चंदन लगाने वाली संस्कृतियाँ आएंगी
मजलूमों का रक्त पीकर जवान हुई सभ्यताएँ आएंगी
वध की भाषा में कत्ल की कथाएँ आएंगी
यहाँ से आगे ऐसा बहुत कुछ आएगा
लाशों से पटे धर्मस्थलों के गर्भगृह में बर्बरता की करूणा से तर्कयुद्द लड़े जायेंगे
यहाँ से दुःख नहीं, दुःख के कारण आएंगे
यहाँ से आगे बहसों का अंधड़ आएगा
यहाँ से आगे पुनर्व्याख्याओं की लू चलेगी
जिनकी चेतना के गुणसूत्र अनुकूल नहीं हैं ऐसे मौसम के लिए वे लौट जाएँ
बहुत भीषण है यहाँ से आगे कलाओं की दुनिया
बहुत दुर्गम है यहाँ से आगे संवेदनाओं के रास्ते
यहाँ से बदलते हैं कहानी के पात्र
यहाँ से बदलती है कविता की भाषा
यह इस नयी सदी और सभ्यता का आखिरी मोड़ है
इस मोड़ से जो लौटना चाहते हैं, लौट जाएँ।

वे सारे मेरे अपने हैं

जो सभ्यता के इतिहास में अवर्णित रहे
जिनका होना, न होने से बिल्कुल भी अलग नहीं रहा
जो हवा और पानी की तरह चुपचाप अपने काम पर गए
और वापस लौटकर गुम हो गए ब्रह्माण्ड के किसी कोने में
जिनका उल्लेख भाषा में कहीं भी नहीं पाया जा सकता
इतिहास जिनके नामों के पीठ पर लदकर हम तक आता है
वे उनके सिपाही हुए
हरक्यूलिसों और अशोकों की निर्मम महानता के लिए
उनकी हवस के लिए
लड़े और बेनाम दफ्न हो गए युद्धभूमि की कोख में
वे सारे मेरे अपने हैं
जिनकी मृत्यु का मुआवजा अदद दो आँसू की मेहरबानी के लिए तरसता रहा
इतिहास जिन्हें विराट शौर्यजीवी योद्धा कहता है
उनकी जमीन की तरफ देखिये
वे मेरे पुरखों की लाशों की ढेर पर खड़े हैं
साफ और सम्मानजनक प्यास को घाव भरे
पीठ पर लादकर जीबव भर भटकते रहे
बैलों की तरह जुतते रहे बैलों के साथ
और बैलों से कम मजूरी मिली जिन्हें
बैलों के गोबरों से जिन्होंने रोटियाँ बनायीं
जो ताजमहल बनाए और कत्ल हो गए
जो भूख भरी थाली को बगल खिसका
किसी पुरवासी का छप्पर उठाने के लिए दौड़ गए बेशर्त
वे सभ्यता की सड़ चुकी लाश को कंधे पर
लाद गाथाओं की मुर्दहिया तक पहुँचाते रहे
वे सारे मेरे अपने हैं
वे ज्यादर श्यावर्णी मेहनककश बलिष्ठ हुए
इतिहास ने उन्हें राक्षस कहा और वध किया
पहाड़ की मानिन्द जीवट और रूई की तरह मुलायम
पूँजी के अभाव में सीने में पल रहे मृत्यु को छिपा ले गए
और पीढ़ी की पहली स्कूल जाती बेटी की
लाल चोटी पर फिदा होकर बिफर पड़े
वे किसी की महानताओं के लिए झंडा उठाते रहे
सभा में झाड़ू लगाते रहे
पुल के लिए लोहा काटते रहे
पानी के लिए जमीन खोदते रहे
वे किसी भी वर्णन के आदि-आदि हुए
सभ्यताएं जिनके पसीने को सोखकर हरी होती रहीं
महानताएँ जिनके रक्त से ऐस्वर्य पाती रहीं
गाथाएँ जिन्हें राक्षस कहती रहीं
वे सारे के सारे मेर अपने हैं।

झुकेगा न देश मेरा

डॉ. बिहारी झा

कभी न झुकेगा देश मेरा
ओ भारत के पड़ोसी दुश्मन।
कभी न झुकी है सेना मेरी,
ओ मेरे देश के पड़ोसी दुश्मन।

छल से हमला कर दिया अतीत में,
छल से आक्रमण कर दिया वर्तमान में।
भारत वो देश नहीं कोई देश रहा सके युद्ध भूमि में,
सेना हमारी कमजोर नहीं जो हार सकें किसी युद्ध में।

हाथ में बंदूक है,
सीमा पर तोप है।
आकाश में त्रिशूल हैं,
समुद्र में विक्रांत है।

भारत अभ वो देश नहीं
किसी के चाल में फंस जाएगा।
प्रहरी देश का अब वो है नहीं,
किसी के बहकावे में आ जाएगा।

सीमा पर हर वक्त,
वीर प्रहरी चौकसी करते हैं।
मत झांक मेरे सीमा की ओर,
बड़े-बडें तोप ले वीर प्रहरी सीमा पर ले रहते हैं।

नये-नये घातक हथियारों से
सीमा प्रहरीनित लैस रहते हैं।
मत झां मेर सीमा को तू,
बड़े-बड़े मिसाइल से लैस वो रहते हैं।

थलसेना ही नहीं,
वायुसेना भी लैस है।
वायु क्षेत्र में आओगे,
वहीं ध्वस्त हो जाओगे।

समुद्र मारग से आओगे,
वहीं छलनी हो जाओगे।
प्यार से सीमा पर आओगे,
गले हमसे मिल जाओगे।
पूछ हमारी तोप की ताकत,
उन्नीस सौ एकहत्तर के बंगलादेस की आजादी से।
पूछ हमारे तोप की ताकत,
उन्नीस सौ निनानवे के कारगियुद्ध में,
पाकिस्तान की सेना से।

साथ देगा न कोई देश तुझे,
साथ देघा न कोई देश मुझे।
हम हैं पड़ोसी एक दूसरे के,
अच्छी निगाह से देख मुझे।

होगीकोई सीमा की समस्या,
आपस में बैठ के सुलझा लेंगे।
नहीं लेंगे बंदूक का सहारा,
शांति का संदेश भिजवा देंगे।

आजादी का अमृत महोत्सव

हेमलता गोलछा

आजादी की उमंग दिलों में जगाने को
नव स्वर्णिम युग का उत्थान हुआ।

बिगुल बजा विकास का भारत में
चहुंमुखी उन्नति का सूत्रपात हुआ।

तोड़ पराधीनता की बेड़ियो का
जीवंत लोकतंत्र का निर्माण हुआ।

ग्रामीण विकास योजना की नींव रखी
संविधान के आदर्श स्वरूप का निर्माण हुआ।

शिक्षा को मिला आधार स्तंभ
बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं की धारा का प्रवाह हुआ।

खंड- खंड में बंटे भारत को अखंड बना
३७० धारा का सफाया कश्मीर से हुआ।

आतंकी हमलों का मुंहतोड़ जवाब दिया
सर्जिकल स्ट्राइक का कीर्तिमान नाम हुआ।

मिटाने को भ्रष्टाचार उठाए ठोस कदम
नोट,वोट और खोट में नव चमत्कार हुआ।

सैन्य का सीना चौड़ा, महाशाक्ति मिसाइल से
अतरिक्ष में छलांग से प्रगति क्षेत्र को मुकाम मिला।

स्वच्छ भारत अभिमान है जोरो पर
नमामि गंगा से नदियों का जीर्णो द्वारा हुआ।

देश विनिमार्ण में कड़ियां जोड दी लाखों
आत्मनिर्भर भारत के स्वप्न का संचार हुआ।

पारदर्शिता है चुनौतिशील है राष्ट्रीय नायक
तीन तलाक मिटा सर्वे सन्तु सुखन् * का आगाज हुआ।
मन हरण धनाक्षरी

राधा कृष्ण नाम का
उनके रास प्रेम का
लीलाओं के सुरूप का
होती पूजा आज है।

प्रेम रूप आधार का
कोमल भाव रूप का
प्रेम रूपी कृष्ण का
आज नहीं भान है।

मतलब के भाव का
आपूर्ति की चाह का
प्रभु नाम की आड़ का
झूठी प्रेम चाल है।

निज हित सुलाभ का
प्रेम माया संवाद का
गिरे मानव भाव का
निदक समाज है।

नागफनी मुरझा जाये

मंजु श्रीवास्वासतव 'मन'

तुम सर्जक हो सृज दी तुमने सृष्टि,
पर आओ इक बार निहारों अपनी सृष्टि।
देख के इसका हाल दग्ध ह्रदय होगा,
अश्रु से धूमिल होगी, प्रभू तुम्हारी दृष्टि।
पढ़ लेते हो मन की भाषा, सब कहते है,
भर देते हो सबकी झोली, सब कहते हैं।

कैसे ज्ञाता?

कैसे दाता?
कैसे इतने निर्मोही हो?
चहुँ ओर स्वार्थ और क्रोध की ज्वाला धधक रही है धरती पर।
छोड़ दिया निज संसृति को क्यों भभक रही इस भट्टी पर?
पतझड़ सी वीरना मन है, ठूंठ हुए हैं तन सबके।
निर्निमेष बस देख रहे कब रहमत बसे बारिश बनके।
जर्जर पड़ती इस काया पर, कुछ प्रीत के पत्ते उग आयें,
मानवता के फूल खिले कुछ, नागफनी मुरझा जाये।

हे राजनीति

डॉ. प्रखर दीक्षित

हे राजनीति
मेरा प्रणाम
सत असत सोच उनको प्रणाम

तुम कभी नीति से ओतप्रोत
चाणक्य विदुर का विग्य स्रोत
तुम धर्मधुरी पूरण प्रकामा।।
हे राजनीति...

अतल सुतल पाताल लोक
किस जगह कहाँ पर लगी रोक
तुम सर्व व्याप्त अनुपम सुदामा।।
हे राजनीति...

कैसे कह दूँ तुम साथ नहीं
छल चाल वक्र हैं यहीं कहीं
तुम अभिन्न अंग दक्खिनी बामा।।
हे राजनीति...

नातों के बलिदान प्रखर
पंक, शूल व्यवहार प्रवर
लेकिन आगत शुभदा ललाम।।
हे राजनीति...

कठपुतली

डॉ. रजना निगम

कठपुतली सा नाच रहा
मानुष तेरा तन
कभी नचाये ऊपरवाला
कभी नचाये मन

हाड मांस के पिजरे में
रहती रूप निसंग
जब बुलाया आये उसका
छोड़ जाये तन
बंद मुठठी में लाये किस्मत
खोल पिटारा कर्म गठरिया
बने राजा कभी रंक

उस जादूगर ने भेजा सबको करके सासौं का अनुबंध
खेल हो जाये पूरा
कर दे सांसे बंद

उम्र भर जो जोड़ी दौलत
करके अनेक जतन
कभी कमाई मेहनत से
कभी दुखा कर मन

आसमान में ऊपर बैठा
वह देख रहा सांसौं का नर्तन
एक इशारे पर उसके
रूह छोड़ जाये ये तन

दिए कई किरदार जगत के
रंगमच पर निभाने को
कभी बने सफल अभिनेता
कभी चूक जाये ये मन

उस मायावी की नगरी में
हम चंद दिनौं के मेहमान बने
कब चुक जाये उसकी झोली
कर दे सांसे बंद

रिश्ते नाते, सगे सम्बन्धी
हैं कुछ समय का रेला मेला आये जब उसका बुलाया
नहीं जाय कोई संग

चेहरों का बाजार

मल्लिका डे

चेहरे ले लो, चेहरे...
तरह तरह के चेहरे
अलग-अलग मोल पर
हर भाव के चेहरे

नकाब पहने हुए चेहरे
बिना नकाब के चेहरे
अहंकारी चेहरे
अपमानित चेहरे

सुलझे हुए चेहरे
बिखरे हुए चेहरे
राजाओं के चेहरे
भिखारियों के चेहरे

चेहरे ले लो, चेहरे
अलग-अलग मोल पर
अलग-अलग चेहरे

गोरे चेहरे, काले चेहरे
मोटे चेहरे, पतले चेहरे
सुन्दर चेहरे
बदसूरत चेहरे

मायूस चेहरे
खिले हुए चेहरे
मुरझाए चेहरे
मुस्कराते हुए चेहरे

झूठे चेहरे
सच्चे चेहरे
राजनेताओं के हारे हुए
चेहरे

मनुष्यो के रूप में
भेड़ियों के चेहरे
मनुष्यों के रूप में
गिरगिट जैसे रंग बदलते चेहरे

चेहरों के परत में छिपाए हुए चेहरे
मगरमच्छ के आसुंओ के पीछे छिपे चेहरे
कैसे कैसे चेहरे?
तरह तरह के चेहरे

मनुष्यों के बाजर में
पता नहीं कितने चेहरे
बैच सको तो बेच लो चेहरे
सच्चाई के परत पर सब झूठे चेहरे।

पर, इसमें मौजूद कुछ हैं
अनमोल चेहरे
जिसके लेन-देन नहीं इस बाजार से
इसे पढ़ लो तो
जीवन के हर मोड़
बन जाये अनमोल चेहरे।

औरत

सरिता सैल

वो औरत थी उसकी
वो औरत थी उसकी
वो जब चाहता
अपनी मर्जी से
उसे अलगनी पर से उतारता
इस्तेमाल करता और
फिर वही
रख देता
फिर आता
फिर आता
जितनी बार उसे उतारा जाता
उसके शरीर में एक नस टूट जाती
चमड़ी से कुछ लहू नजर आता
जितनी बार उसे उतारा जाता
उसके नाखुनों से
भूमि कुरेदी जाती
हर कुरुदन जन्म देती एक सवाल को
उसके आँखो का खारापानी
जम जाता उसके घाव पे
उसके लड़खड़ाते पैर
उसके रक्तरंजित मन
उसकी लाचारी
उसकी बेबसी
उन्ह तमाम पुरूषों के लिए
एक प्रश्न छोड़ जाती है
और प्रश्न छोड़ जाती है
औरत केवल देह है???

लाल मेरा भारत माँ का

डायाफिरा खारसाती

सो जा बेटा
बेटा सो जा
राजा बेटादुलारा मेरा
थक गया होगा अब तू सो जा
आया तू बहुत दिनों बाद
आँगन पास माँ के पास।

एक माँ यह सपना देखती
कि लाल उसका साथ होगा
पालती पोसती बड़ा करती
ताकि साथ खड़ा वह होगा।
लेकिन मेरा लाल मेरा दुलारा
एक दिन अचानक बोला
"माँ देश की रक्षा करने मैं चला
सिपाही बन करूँगा देश का भला"।

लाल मेरा कभी अपनी पीठ पर गोली मत खाना
शत्रु को ढेर किए बिना वापस न आना

भारत माँ का कर्ज तुम पर
तिरंगे की शान बनाए रखना।

अब सो जा बेटा
सो जा बेटा लाल मेरा
जब तू अगली बार वापस आयेगा
माँ चौखट पर खड़ी पाएगा।
थक गया होगा अब तू बहुत दिनों बाद

आंगन पास माँ के पास।

आओ देखे

पंकज मिश्र 'अटल'

आओ देखे
आस पड़ोस में
खेतों में जिंदगी सीचते किसानों को,
देखे रेलवे लाइन किनारे
वेतरतीव झुग्गियों को,
उन बच्चों को देखें
आधा दिन बीत जाने पर भी
तलाश रही हैं जिनकी आंखे
सुखी रोटी के
चंद टुकड़े,
देखे जहाँ अभी भी
संघर्षरत है महिलाएं अस्तित्व के लिए,
देखे
कुछ घूरती आंखो को
और देखे
उन आंखों में तैरते खारीपन को,
देखे उस ओर भी
जिधर नहीं
देखता है कोई भी, या फिर
कर देता है अनदेखा,
आओ देखें,
जहाँ जमी हैं जिंदगी पर
अभी भी वर्फ
और तुली हैं तमाम नजरें
करने को बलात्कार,
नहीं है ठीक कहना कुछ भी
क्योंकि एक जमात नामर्दो की
कर रही है
जुगाली शब्दो की,
और हो रही है शिकार
बारी-बारी सभी बस्तियां,
शायद यही ठीक
समय होगा
जबकि आने वाली है शाम
शायद यही ठीक
समय होगा लड़ने का
अंधेरे के खिलाफ
यही ठीक समय
विवश करने का हर घूरती नजर को
परन्तु इस सबके लिए
देखना होगा
हर उस ओर जिधर
टांक दी गी हैं जुवानें और घोल दिया है
शीशा कानों में, मगर
प्रतीक्षारत हैं चेहरे, क्योंकि
नहीं देखा है किसी ने उस ओर
या फिर नहीं जुटा सका है कोई हिम्मत
आओ देखें
बटोरप दृष्ठियों को,
भरे शब्दों को मुंह में, और
चल दें इसी समय
सुबह के जन्म लेने से पहले ही
तय करनी होगी यात्रा, मगर
देखना होगा हर उस ओर
जिधर नहीं देखा है किसी ने

न ही चाहता है देखना
देखे हर आंख में झांकरकर,
हर चेहरे के पीछे के चेहरे को.
चीखों में बदलते शब्दों में
बेहतर यहीं होगा
कि देखें आस-पास में
वरना मर जाएंगे सारे शब्द
देखें आस पड़ोस में क्योंकि नहीं है कोई विकल्प
सिवाय देखने के
आओ,
तय करना होगा कुछ न कुछ
इसलिए
आओ देखें,
आस-पास एक नई तैयारी के लिए
रात को आत्महत्या करते हुए, और
जन्म लेते जिदंगी की इबारत को,
आओ देखे,
क्योंक देखना लाजिमी है,
बेहतर सुबह के लिए तो देखना ही होगा,
आओ देखे।

अभी भी है समय

आओ इन्हें भी सुने
क्योंकि कम है समय
और हो न जाए देर कहीं,
ओढ़ ले चादर
आकास की यह दुनिया
और हम
करते ही रह जाएं संवाद
सिमट जाएं आवाजे
उतर आए नदी ओर सी
आंखो से गालों तक और
भीग जाए फिर से एक कविता
बहुत सारे सवालों में
डूब जाए इंसानियत
और हम बस करते रहे स्याह
पन्नों को
मे कहता हूँ ,कि
हमारे सोचने से पहले ही कहीं
डूब न जाए एक पहाड़ी नदी
मन की घाटियों में
क्योंकि बचा है
बहुत कम समय
और तराश रही है रात
अपने तरीके से
और हम हैं कि कर रहे हैं इंतेजार
करना होगा
संवाद समय रहते हुए
धुप्प अंधेरे में
फैलती स्यही से
कुछ सवाल भी
रहना होगा सावधान
नुकीलेपन से हवाओं के
और दृष्टियों से दिशाओं की
समय रहते हुए
क्योंकि अभी है समय
बना रही है आर्ट नन्ही बच्ची
भर रही है रंग
जा रहे हैं जो फैलते
उकेर रही है
मुस्कानें उस कैनवास पर
जल्दी करो
टांक दो
अंधेरे पसरने से पहले ही
क्योंकि अभी समय है
और चिंताहै मुझे
कि हो न जाए देर कहीं
क्योंकि समय कम दो है
लेकिन अभी भी है समय।

कथा खंड

जीवनचक्र

कीर्ति श्रीवास्तव

२४२ सर्वधर्म कालोनी, सी-सेक्टर, कोलार रोड, भोपाल-४६२०४२, (मध्य प्रदेश)

आज मेरे पैरों के नीचे से जमीन ही खिसक गई। स्तब्ध- सी रह गई मैं। जो मेरे जहन में था ही नहीं, जो कभी याद भी नहीं आया, वह मंजर आज याद आने लगा। क्या आने लगा, सालों पहले ऑखों के सामने से गुजरा वो दृश्य हू-ब-हू आज मेरे सामने ही था। फर्क बस इतना था कि पहले मेरी आँखे नम भी हो जाती थीं और आज आँखो से आँसुओं का सैलाब आया हुआ था।

ये तो आज भी याद है मुझे कि माँ कितनी सीधी-सादी- सी रहती थी। सीधे पल्ले की साड़ी, माथे पर बड़ी-सी बिंदी, हाथों में भरी- भरी चूड़ियाँ, मांग में भरा लाल रंग का सिंदूर और तेल लगी एक चोटी। साथ ही सर पर हमेशा पल्ला। मैं और मेरा भाई अपने पापा के ज्यादा करीब थे। होते भी क्यों न माँ से पहले वह हमारी जरूरत पूरी करते थे। किसी भी जरूरत के लिए माँ से पहले हम पापा को याद करते थे।

माँ पढ़ी- लिखी नहीं थी। शायद यही कारण था कि हमेशा पापा की रट हम लोग लगाए रहते थे। माँ का काम तो बस हमारे लिए खाना बनाना, हमारे कपड़े धोना,कपड़े आयरन करना, स्कूल बैग तैयार कर हमें स्कूल के लिए तैयार करना ही था। माँ ने कभी इसकी शिकायत ही नहीं की और हमने भी कभी जानने की कोशिश नहीं की कि माँ क्या चाहती है। वह अपना समय कैसे काटती हैं। उन्हें कोई समस्या तो नहीं है। यह कभी जाना ही नहीं शायद इसका कारण भई पापा ही थे। उन्होंने कभी भी माँ को महत्व ही नहीं दिया और न ही हमें माँ के करीब जाने दिया।

मुझे याद है मैंने कभी भी अपनी सहेलियों से अपनी माँ को नहीं मिलाया। आधुनिक युग ने मुझे गाँव की मेरी माँ से उन्हें मिलवाने की कभी इजाजत ही नहीं दी। भाई छोटा था, तो जैसा मैने किया उसने भी वैसा ही किया, या यूँ कहें जैसा पापा कहते रहे हम करते रहे। पापा हमेशा हमारा ध्यान रखते थे। यह बात अलग थी कि वह बीच-बीच में दो-चार दिन के लिए घर भी नहीं आते थे। तब हमारा पूरा ध्यान रखती थी। पर उन चार दिन का ध्यान पापा के सामने कम ही रहा। माँ सब जानती थी कि वह कहाँ

रहते हैं, क्यों नहीं आते। पर हमेशा शांत रहती थीं और कुछ नहीं कहतीं थी। आज लगता है शायद वह सोचती होगी कि दो वक्त की रोटी और सिर छुपाने के लिए छत मिल रही है तो कैसी शिकायत, किससे शिकायत उनके माता-पिता के वो संस्कार कि 'जहाँ डोली गई, अर्थी भी वहीं से निकले' उन्हें कुछ ओर सोचने का मौका ही नहीं देते थे।

एक दिन पापा किसी दूसरी औरत को घर ले आए क्योंकि पापा हमारे लिए हमेशा सही होते थे तो वह आज भी हमें गलत नहीं लगे। पापा हमारे लिए सुपर हीरो थे। माँ चुपचाप खड़ी जैसे कि वह जानती थीं कि एक न एक दिन ऐसा ही होगा।

पापा ने बस माँ से इतना ही कहा- 'तुम यहाँ इसी घर में रहो मैं तुम्हारा पूरा खर्चा उठाऊँगा और हर महीने तुम्हारी जरूरत का पैसा भेजता रहूँगा।'

पापा उस दूसरी औरत के साथ मुझे और मेरे छोटे भाई को लेकर उसी शहर में एक अलीशान घर में रहने लगे। माँ चुपचाप खड़ी थीं और आँखो से आंसुओं की धारा बह रही थी। आज भी कुछ न बोली।

आज उनके आँसुओं की धार का मोल समझ पा रही हूँ। जब मेरे पति ने मुझे तलाक देने की बात कहीं और कहा मैं दूसरी शादी कर रहा हूँ तुम अपना ठिकाना देख लो। कुछ समझ नहीं आ रहा था, समझ तो बस यह की उस समय माँ पर क्या गुजरी होगी। सोच रही थी कि माँ तो अनपढ़ थी पर मेरा क्या कसूर।

शायद भगवान माँ के आँसुओं का मोल बताना चाह रहा था मुझे या माँ के साथ कभी खड़ी ने होने की सजा था। जीवन एक चक्र समान होता है। वो जहाँ से घूमना शुरू करता है एक बार वापस वहीं आकर रूकता है। पर शुरू से अंत तक आते-आते काफी कुछ बदल जाता है।

आज माँ होती तो वह मेरे साथ खड़ी होती। मेरे आँसुओं को पोंछ रही होती। कभी माँ के महत्व को समझा ही नहीं। तब भी नहीं जब स्वयं माँ बनी। माँ से माफी भी नहीँ माँग सकती क्योंकि वह आज इस दुनिया में नहीं हैं।

याद है मुझे वो दिन जब पापा का फोन आया था कि 'तुम्हारी माँ अंतिम साँसे गिन रही है। तुमहें देखना चाहती है।' पर मैने अपने काम को छोड़कर जाना उचिन नहीं समझा। हम बच्चों से अच्छे तो पापा निकले कम से कम उनके अंतिम समय में उनके साथ तो थे। यदि वह हमारे साथ होतीं तो यकीनन बहुत दुःखी होतीं। मेरी यह हालत देखकर।

माँ, हो सके तो मुझे माँफ कर दो आपके दुःख, अकेलेपन को मैं कभी समझ ही नहीं पाई। काश मैं आपको इंसाफ दिला पाती। काश में अपकी उस स्थिति को समझ पाती। काश मैं आपके साथ होती। आज मेरे पास पछताने के अलावा कुछ भी नहीं हैं। पर माँ मैं आपसे वादा करती हूँ आपको इंसाफ तो नहीं दिला पाई, आपके लिए कभी पापा से नहीं लड़ी पर आज लड़ूँगी आपके लिए, आप जैसी अनेक महिलाओं को लिए और अपने लिए......

नया घूंघट

तुलिका श्री
वडोदरा (गुजरात)

घुंघट में रहना हिताक्षी को भी कभी भी पसंद ना था। लेकिन करती क्या, मनपसंद के लड़के से प्यार करेगी तो कहीं ना कहीं समझदारी निभानी पड़ेगी ही और वह भी उत्तर प्रदेश के वाराणसी शहर में .....

हे भगवान! अम्मा कहती थी लाज तो हमारी आंखों में होनी चाहिए। जरूरी नहीं. बड़े-बड़े घूंघट निकाल कर हर समय आदर का प्रदर्शन करें।

बहू! यह बड़े ताऊजी है, यह उनकी अम्मा हैं उसने धीरे से घूंघट में से देखा ताऊ जी खुद ही साठ बासठ के होंगे और उनके दो बेटे, बहू, पैर छूती हुई आगे बढ़ी तो और बड़ी उम्र की महिला दिखीं। एकदम तंदुरूरस्त चलती फिरती बड़ी अम्मा.....

देखो घुंघट कैसे लेते हैं, और हां यहां खुले डिजाइन के ब्लाउज यह सब ना चले। सासू मां, हिताक्षी के साथ कड़क आवाज में बात करती तो उसका दिल बैठ जाता।

कैसे जी पाएगी यहां, डॉक्टर बन गई कमलेश के साथ शादी भी हो गई.....

पढ़ाई का दूसरा ही साल था एक दिन वह पुस्तकालय की सीढ़ियों पर बैठी हुई कुछ पुस्तकें पलट रही थी कि तभी आवाज सुनकर उसका ध्यान बंटा था

क्या कर रही हो ? कहां से आई हो तुम ?

वह घबराई सी उठकर जाने लगी थी तो कमलेश ने ताना कस दिया था!!

पढ़ने के लिए आई हो, हौसला तो रखना होगा हो और बात करने की भी हिम्मत नहीं है

कैसे बनेगी डॉक्टर ? घुंघट के बीच में कब तक झूलती रहोगी तुम लड़कियां ?

ना..... ना!!!!!

वह बीच में बोल पड़ी थी, घबरा गई थी, लेकिन फिर हंस पड़ी और इस तरह से दोसती का सिलसिला आगे चला पड़ा कमलेश दिखने में सांवले थे लेकिन खूब अच्छे व्यक्ति के मालिक और हिताक्षी तो उनके आगे जैसे हवा में उड़ने वाली परी हो,

तुम्हारे गुजरात में क्या सब लड़कियां ऐसी ही हैं ? तुम्हारे गांव में अनाज नहीं होता

क्या ? कुछ खाते पीत नहीं हो ?

क्या पूरा....... आधा?

कमलेश उसे छेड़ते और हिताक्षी रोने –रोने हो जीती थी।

नहीं –नहीं मेरा गांव बहुत सुंदर है, गणेशपुरा

अच्छा-अच्छा हमारे बनारस में भी शंकपुरा

तुम यही क्यों नहीं रह जाती हिताक्षी?

ना-ना मुझे तो अपने गांव ही जाना है, बड़ोदरा के पास बहुत सुंदर, गांव में सारी दुनिया से सुंदर गांव! कहीं कोई रोक- टोक नहीं है। यहाँ तो अलग ही माहोल है लड़कियों के साथ कैसे बातें करते हैं।

ऐसा नहीं है हिताक्षी

तो क्या आप मेरा नाम भी जानते हैं।

हां, मुझे और भी सब कुछ मालूम है कोई भी नोट्स की परेशानी होगी तो मुझे मिल लेना। मैं यहीं पर होता हूँ टाइम और जगह बता कर कमलेश अपनी साइकिल उठाकर चल पड़ें। उसे देखती रह गई जितना ऊंचा लंबा कद था कमलेश का, साइकिल भी इतनी मोटी खरीद रखी है।

हमारे गणेशपुरा में ऐसी साइकिल देखने को नहीं मिली। और बहुत सारे प्रैक्टिकल में कमलेश का साथ लेती वह दोस्ती से आगे कब परिवार में बदलती गई, कुछ पता नहीं चला।

अब क्या यहीं बाकी रह गया है गुजरात से बहुरिया लाएंगे?

कौन से संत महात्मा ने मना किया है कि तुम बनारस में हो तो वहां से बहू नहीं ला सकती

कहकर कमलेश ने सबका मुंह बंद कर दिया था।

सब जानते थे कमलेश के पिताजी की दवाइयों की दुकान थी और उनकी दिली तमन्ना थी कि उनका बेटा डक्टर बने। पिताजी की मौन सहमति से ही सब कुछ अच्छा हो गया। हिताक्षी बहू बनकर कमलेश के घर आ गई थी। मानस- मंदिर घूमते हुए उसने यह बातें कमलेश को बताई थी.....

डॉक्टर बनने की तमन्ना में बहुत सारे फॉर्म भर दिए थे। एक के बाद एक परीक्षा देते-देते बीएचयू में एडमीशन की खबर जब ई-मेल पर आई तो वह इतनी जोर चिल्लाई की पूजा करती हुई दादी मां दौड़कर आई थी

क्या हुआ रे छोकरी तुझे? कुछ नहीं कुछ नहीं

फिर, बहुत सारी बातें घर में घूमने लगी थी,

कैसे जाएगी मेंरी छोकरी?

मैं तो ना जाने दूं

कैसे पढ़ेगी वहां? रहेगी कैसे? नहीं कुंदन अपनी बेटी को नहीं भेजेंगे। कितनी

सुंदर बच्ची है मेरी हिताक्षी।

बोल तेरी क्या मर्जी हैं? पिताजी खेत से बहुत सारी मेथी का साग तोड़ कर लाए थे। तू तो हिम्मती है ना मेरी बच्ची तो क्या कुंदन सुथार की बेटी डॉक्टर नहीं बन सकती? मेरे दोनो बेटे तो बस चना, मकई मेथी उगाएंगे। इतना पैसा कोन भरेगा?

उधर के लड़के भी ठीक नहीं है यूपी के लड़के ठीक नहीं होते? दादी की आंसुओं की धार न रूकती थी.

खुद ही तो बोलती थी मेरी गुड़िया डॉक्टर बनेगी अब जाने दो ना दादी, घर के लोग मनुहर में लगे थे।

मां!! मधुसूदन काका है कितनी बड़ी दुकान है उनकी सोने चांदी की पूरा परिवार, लक्ष्मी फोई भी वहीं रहती है।

युवावस्था की उमंगे, डॉक्टर बनने का सपना और बहुत सारा आर्शीवाद लिए हिताक्षी ने जब वाराणसी कैंट- सटेशन पर कदम रखा तो दिल मोरनी जौसा नाच रहा था, मेरे सपनों के शहर को नमस्कार, भोले बाबा तो सोमनाथ में भी हैं।

दादी यही रोज- रोज कहानी सुनाती है

सारे बम भेले अरे भाई है, जैसे तेरे यह भाई है सुरेंद्र और मेहुल।

डॉक्टर बन जाएगी तो क्या हमसे भी फीस लेगी

तो.....

अरे दीदी, मुफ्त में किसी का भी चेकअप ना करें!! हरिओम नमस्कार काका जी

विचारों की श्रृंखला ने मोड़ लिया ता किन्ही आवाजों ने। आश्रम से दो सेवक स्टेशन पर गाड़ी लेकर आए थे। सामान रखकर गाड़ी कैंट स्टेशन से भेलपुर आश्रम की ओर चल पड़ी थी और सुंदर शहर है, इतनी मीठी – मीठी खुशबू, हर जगह जलेबी, उबलता दूध, रबड़ी कप जैसा बना हुआ मिट्टी का कोई बर्तन और यह जलेबी के जैसा ही कुछ और भी दिख रहा है। यह क्या है बाबा?

इमरती है बैटा। अनमने दिख रहे थे, वह, शायद आंसुओं को छुपाने की कोशिश कर रहे थे। बार-बार झूठ में ही सिर से पगड़ी उतारकर चेहरे पर रगडते। आंसुओं को छुपा रहे थे। कैसा होता है मिट्टी का बंधन, जन्मों तक उतरता ही नहीं, साध बनी रहती है, उसकी। आज बेटी के साथ विश्वनाथ बाबा के दर्शन फिर से करूंगा। पचास पचपन साल पहले अपने पिता के साथ काम की तलाश में मुंबईकी गाड़ी पकड़ ली थी कोई तीस-चालीस लोगों का जत्था आशापुरा (वाराणसी) से चल पड़ा था। पहली बार रेल में बैठा था। इतनी तेज पेड़ भी भागते हैं भला, वह आंखे फाड़े खिड़की में सिर दिए चिल्ला रहा था.....

ना, रे! यह तो हमारी गाड़ी भाग रही है बलदेव भैया को इतना सब कुछ कैसे समझ आ जाता है। मैं कब बनूंगा इनके

जैसा......

आठ बरस का कुंदन, आज भी उनका साया मेरे परिवार पर बना हुआ है। पूरा कुनबा निकल पड़ा था। गांव में कुछ बड़े बूढ़े और दादी मां मां रह गई थी। पहले काम ढूंढ ले फिर हम तुम्हें ले जाएंगे हाथों में झोला लटकाए। पुराने चादरों को लपेटे हुए कोई मुंबई कहां पहुंच पाया था, रास्ते में ही कोई भवानी मंडी तो कोई गोधरा तो कोई पेटलाद और कोई बड़ोदरा गणेशपुरा पहुँच गए थे। यह जो पेटलाद में नागेंद्र भाई हैं उनके दादा भी हमारे साथ आए थे। बहुत बढ़िया लकड़ी का काम करते है। पल भर में ही टूटी खटिया, खटोला, अलमारी, पालना बांस का छपरा ऐसे मरम्त कर देते कि सामने वाला सोच भी नहीं सकता।

अकेले में क्या बडबड़ा रह हो दादी ने उनकी बात सुन ली थी। वैसे बात तो ठीक ही है हाथ में हुनर हो तो आदमी कहीं भी कमा खा सकता है।

दादी ने बड़े दुलार से दादा को देखा था। आप भी तो घर बनाए में कारीगर हो।

अरे बस राम कृपा से इतना घर बसा गया मैं।

कुछ मांगना चाहता था तुमसे......

रहने दो यह सारी मेहनत तो तुम्हारी......

इतनी सी बात है कि कल हिताक्षी को बाहर पड़ने जाने दो, रोकना मत, छोकरी है हमारे घर की। खुशी – खुशी उसको विदाई देना। मजदूर घर की बेटी आज बाहर निकलेगी तो लोगों का संग साथ पाकर अंदर की विद्या सब दुनिया में उजागर होगी। कुल देवी की कृपा से घर वर भी अच्छा मिल जाएगा।

आगे की बात कहने सुनने की जरूररत भी कहां थी अचानक ही दरवाजा खड़क गया था। प्रभा रानी थी,

अम्मा के पैरों में सुबह से दर्द है हिताक्षी के लिए नई कमीज मिली है, इसीलिए तेल की कटोरी लाई थी। दादा भीगी आंखों से अपनी पत्नी को देख रहे थे। समय के मोटे पर्दे ने नई उम्मीदो में अपना रूप बदलना शुरू कर दिया था........।

मुस्कान

रूनू बरूवा रागिनीतेजस्वी

जोरहाट

"राजी, जरा इधर आना....." उसका झोला देखकर मैने उसे बुलाया।

"आई बीबीजी" हाथ पोंछते हुए वह आई और मेरे हाथों में झोले को देखकर ठिठक गई!

" यह क्या है राजी?." मैने उससे पूछा

"...."

"राजी?...."

"...." राजी खामोश सर झुकाए खड़ी थी। क्योंकि उसके झोले में कुछ दाल, चावल और आलू प्याज पड़े हुए थे जो कई दिनों से गायब हो रहे थे।

मैने उससे फिर पूछा- "बोलो राजी तुम ऐसा क्यों करती हो? मुझे सक तो कई दिनों से था! तुम मुझसे मांग भी तो सकती थी"! मैने दुखी होकर कहा।

वह एक दम से मेरे पैर पकड़ कर बैठ गई।

"बीबीजी, आप पहुत अच्छी हो। मुझे हमेशा कुछ न कुछ देती रहती हो! मेरे दो छोटे-छोटे भाई-बहन है। बीमार माँ है! मेरा बाप तो माँ को मेरे बचपन में हो छोड़कर चला गया था। माँ ने फिर शादी कर ली दो बच्चे हुए और वह बीमार रहने लगी तो उसके इस पति ने भी छोड़ दिया। माँ की दवा, खाने-पीने का खर्च, झोपड़े का भाड़ा..... माँ की खिचड़ी के लिए आपके राशन से दो आलू प्याज और दाल चावल ले जाती हूँ। हम तो जैसे- तैसे खा लेते है लेकिन डॉक्टर ने माँ को अच्छा हजम होने वाला खाना खिलाने को कहा है।" राजी का चेहरा आँसुओं से भीगा था! पता नहीं कब मैं उसके करीब आ गई थी। कुछ ऐसे ही दिन मैने भी देखे थे। रूपयों की किल्लत का मुझे अनुभव था। मैनें तब अपनी बहुत सारी किताबों को बेचकर घर चलाया था! उसके कंधे पर हाथ रखकर मै बोली, "राजी, चल घर का राशन लाते है।"

किराने की दुकान से महीने भर का राशन अपने लिए लिया और उसकी माँ के लिए भी दाल— चावल, आलू-प्याज, तेल, आटा और मसाले भी।

शाम को जाते वक्त मैनें उसके चेहरे पर पहली बार मुस्कान देखी।